शैक्षणिक

संदर्भ

वर्ष: 13 अंक 71 (मूल क्रमांक 128)
मई-जून 2020 मूल्य: ₹ 50.00

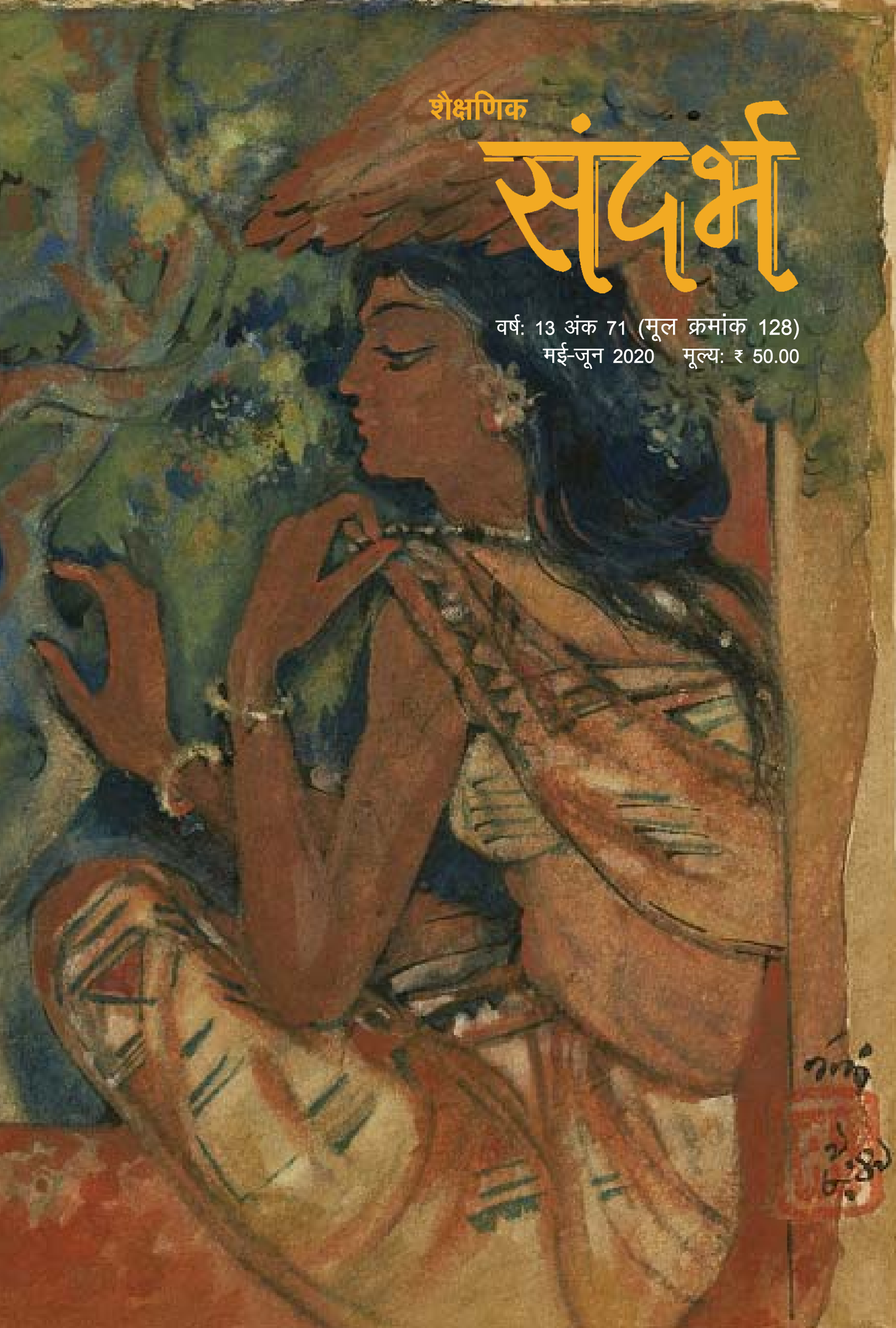

सम्पादन
राजेश खिंदरी
माधव केलकर

सहायक सम्पादक
पारुल सोनी
कोकिल चौधरी

सम्पादकीय सहयोग
विनता विश्वानाथन
सी.एन. सुब्रह्मण्यम
सुशील जोशी
उमा सुधीर

आवरण
राकेश खत्री व कनक शशि

वितरण
झनक राम साहू

सहयोग
कमलेश यादव

शैक्षणिक
संदर्भ

शिक्षा की द्वैमासिक पत्रिका
वर्ष: 13 अंक 71 (मूल क्रमांक 128)
मई-जून 2020

मूल्य: ₹ 50.00

एकलव्य फाउण्डेशन
जमनालाल बजाज परिसर
जाटखेड़ी, भोपाल-462 026 (म.प्र.)
फोन: +91 755 297 7770, 71, 72, 73
www.sandarbh.eklavya.in
सम्पादन: sandarbh.eklavya.in
वितरण: circulation.eklavya.in

अब *संदर्भ* आप तक पहुँचेगी रजिस्टर्ड पोस्ट से इसलिए सदस्यता शुल्क में वृद्धि की जा रही है।

सदस्यता शुल्क	एक साल (6 अंक)	तीन साल (18 अंक)	आजीवन
	450.00	1250.00	8000.00

मुखपृष्ठ: ***जंगल में झोपड़ी के बाहर बैठी नूलिया जनजाति की एक महिला।*** यह चित्र 1949 में नंदलाल बसु द्वारा बनाया गया था। हमारे जीवन में ललित कलाओं का एक विशेष स्थान है जो उतना ही महत्वपूर्ण है जितना विज्ञान, साहित्य आदि हैं। कला शिक्षण के माध्यम से हम जनसामान्य में अपने ही समाज में निहित कलाबोध को आधार बनाकर सौन्दर्य बोध को विकसित कर सकते हैं। कला केवल भोग-विलास की चीज़ नहीं है, बल्कि वह शिल्प का आधार है जिससे हम स्वावलम्बी बनकर अपनी जीविका कमा सकते हैं। स्कूली शिक्षा तथा विश्वविद्यालयीन शिक्षा का दायित्व है कि वे कला शिक्षण पर विशेष ध्यान दें। सम्बन्धित लेख में कलागुरू नंदलाल बसु इन्हीं मुद्दों पर चर्चा करते हैं, पढ़िए पृष्ठ 75 पर।

पिछला आवरण: ***जीवजगत में लिंग निर्धारण।*** मनुष्यों सहित अधिकांश बहु-कोशिकीय जीवों में जीवन की निरन्तरता बनाए रखने में लैंगिक प्रजनन एक महत्वपूर्ण गुण है। जैव-विकास ने सजीवों को यह तय करने के लिए कई तरीके दिए हैं कि कोई जीव नर होगा या मादा। इस लेख के ज़रिए समझते हैं कि लिंग निर्धारण की अलग-अलग विधियाँ कौन-सी हैं और लैंगिक गुणधर्म कैसे तय होते हैं। पढ़िए लेख पृष्ठ 07 पर।

यह अंक त्रिवेणी एजुकेशनल ट्रस्ट के वित्तीय सहयोग से प्रकाशित किया जा रहा है।

Links
Cover 3. https://www.youtube.com/watch?v=nlRkwuAcUd4
Cover 4.1 https://en.wikipedia.org/wiki/Y_chromosome
4. 2 https://www.scientificamerican.com/article/sex-redefined-the-idea-of-2-sexes-is-overly-simplistic1/

शैक्षणिक

संदर्भ

"संदर्भ अब रजिस्टर्ड डाक से
यानी आप तक पहुँचना सुनिश्चित।"

संदर्भ की सदस्यता दर बढ़ाई जा रही है ताकि
संदर्भ रजिस्टर्ड डाक द्वारा आप तक भेजी जा सके

एक प्रति का मूल्य 50 रुपए

सदस्यता शुल्क

एक साल
450 रुपए

तीन साल
1250 रुपए

आजीवन
8000 रुपए

प्रति बाउंड वॉल्यूम
300 रुपए

ई-मेल: pitarakart@eklavya.in

वेबसाइट: www.pitarakart.in

बैंकिंग प्रणाली के लिए भरोसा और नियमन

रिज़र्व बैंक की भूमिका एक चौकीदार के रूप में है जो सारे जमाकर्ताओं की सुरक्षा सुनिश्चित करता है और एक रेफरी भी है जो इस बात का ख्याल रखता है कि सारे बैंक नियमों का पालन करें। लोगों का भरोसा बना रहे कि जो पैसा वे जमा करते हैं, वह सुरक्षित है। देश का केन्द्रीय बैंक होने के नाते रिज़र्व बैंक यह सुनिश्चित करता है कि प्रत्येक बैंक के पास पर्याप्त नगदी रहे। इसके लिए वह सबके लिए कुछ नियम निर्धारित करता है। इस लेख के ज़रिए समझते हैं कि आखिर बैंक काम कैसे करते हैं। यदि बैंक के पास अपने सारे खाताधारकों को लौटाने के लिए पैसा नहीं होता, तो वह लोगों को यह वायदा कैसे करता है कि उनकी माँग पर या जब वे अपना पैसा वापस लेना चाहें तो वह भुगतान करेगा जबकि उसके पास भुगतान के लिए पैसा ही नहीं होता। बैंक जब लोगों का पैसा जमा करता है, तो वह उसका करता क्या है? इन समस्त महत्वपूर्ण मुद्दों को समझाता है यह आलेख।

63

शिक्षा में कला का स्थान

हमारे जीवन में ललित कलाओं का एक विशेष स्थान है जो उतना ही महत्वपूर्ण है जितना विज्ञान, साहित्य आदि हैं। कला शिक्षण के माध्यम से हम जनसामान्य में अपने ही समाज में निहित कलाबोध को आधार बनाकर सौन्दर्य बोध को विकसित कर सकते हैं। कला केवल भोग-विलास की चीज़ नहीं है, बल्कि वह शिल्प का आधार है जिससे हम स्वावलम्बी बनकर अपनी जीविका कमा सकते हैं। स्कूली शिक्षा तथा विश्वविद्यालयीन शिक्षा का दायित्व है कि वे कला शिक्षण पर विशेष ध्यान दें। इस लेख में कलागुरू नंदलाल बसु इन्हीं मुद्दों पर चर्चा करते हैं।

75

शैक्षणिक संदर्भ

अंक-71 (मूल अंक-128), मई-जून 2020

इस अंक में

04 | आपने लिखा

07 | जीवजगत में लिंग निर्धारण: क्या जानते हैं हम?
कोकिल चौधरी

16 | भविष्य: भाग-7
चारुदत्त नवरे

21 | हम वैसे ही पढ़ाते हैं, जैसा हमें पढ़ाया गया था: भाग-2
शेषागिरी केएम राव

32 | प्रकाश की गति मापना - कुछ कोशिश धरती पर: भाग-2
अंजु दास मानिकपुरी

43 | गणित और भौतिक जगत का सम्बन्ध
दीपक धर

58 | मातृभाषा आधारित बहुभाषी शिक्षा क्यों लाज़मी?
संजय गुलाटी

63 | बैंकिंग प्रणाली के लिए भरोसा और नियमन
अरविंद सरदाना

75 | शिक्षा में कला का स्थान
नंदलाल बसु

82 | आदम, एक दोपहर
इतालो कैल्विनो

आपने लिखा

रमाकान्त अग्निहोत्री ने भारतीय भाषाएँ व संविधान पर अपने कुछ लेख टिप्पणियों के लिए साझा किए हैं। भाषा से सम्बन्धित उन चर्चाओं की यह एक अत्यन्त सुस्पष्ट और विचारोत्तेजक ढंग से हिन्दी में लिखी गई आलोचनात्मक व्याख्या है जो 1940 के दशक में संविधान सभा के सत्रों में हुई थी। रमाकांत अपने विवरण एवं व्याख्याओं को संविधान के उन अनुच्छेदों के इर्द-गिर्द बुनते हैं जो उन बहसों में हुए समझौतों के नतीजे के रूप में सामने आए थे। परिणामस्वरूप, उनका यह लेखन और भी प्रभावशाली ढंग से इस बात के अध्ययन के रूप में सामने आता है कि किस तरह काफी हद तक विचित्र एवं बेतरतीब समझौतों के बावजूद संविधान ने हमें कुछ बेहतर करने के आधार उपलब्ध कराए हैं, बशर्ते कि हम वह करना चाहते हों।

मैं निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि अँग्रेज़ी में वाकई इसके मुकाबले की कोई कृति उपलब्ध नहीं है। हालाँकि, इन बहसों को लेकर अँग्रेज़ी में बहुत-से ठोस अकादमिक अध्ययन हुए हैं; सिर्फ इतना ही कि इस तरह की छोटी लेकिन आलोचनात्मक व्याख्या अँग्रेज़ी में भी अत्यन्त उपयोगी होगी।

प्रोबल दासगुप्ता
कोलकाता, पश्चिम बंगाल

संदर्भ अंक-127 में प्रकाशित अरविंद सरदानाजी का लेख *नई शिक्षा नीति और स्कूलों की बोर्ड परीक्षाएँ* पढ़ा। अरविंद सरदानाजी ने बहुत बारीकी-से पूरी समस्या पर विचार किया है और शुरुआत के लिए यही अच्छा होगा कि आई.आई.टी. प्रवेश परीक्षा और मेडिकल की नीट परीक्षा के मॉडल में सुधार हो। इस भर्ती से तैयार किए गए विद्यार्थी-शिक्षक इसी विचार को दूसरे कॉलेजों तक लेकर जाएँ तो शायद एक नाभिकीय प्रक्रिया की तरह कुछ कदमों की शुरुआत हो सकती है। अवधारणात्मकता और रचनात्मकता की शुरुआत से स्कूलों की पढ़ाई और दाखिले पर भी असर पड़ेगा। और जैसा कि उन्होंने बार-बार चिन्ता प्रकट की है, ट्यूशन और कोचिंग के बाज़ार भी धीरे-धीरे-से बन्द होंगे। उम्मीद है, यह लेख शिक्षा मंत्रालय को और दूसरी जगहों पर भी भेजा गया होगा। सभी राज्यों के बोर्ड और शिक्षा मंत्रियों को भी इस लेख को तुरन्त भेजे जाने की ज़रूरत है। प्रवेश परीक्षाओं में ऐसी एक शुरुआत नौकरियों में यूपीएससी और दूसरे भर्ती बोर्ड की परीक्षाओं पर भी असर डालेगी। कोचिंग को बढ़ाने में नौकरियों की प्रवेश परीक्षा भी उतनी ही ज़िम्मेदार है। लेकिन मूल ज़िम्मेदार तो स्कूल और विश्वविद्यालय की शिक्षा व्यवस्था ही है।

निराशाजनक पक्ष यही है कि ज़्यादातर लोग नई बातों की तरफ

ध्यान ही नहीं देते और इसीलिए ट्यूशन और कोचिंग के रोग और उसके खतरनाक असर के बावजूद सुधार की कोई रोशनी मुश्किल से नज़र आती है। खैर, प्रयास जारी रहना चाहिए और आप यह काम बखूबी कर रहे हैं।

प्रेमपाल शर्मा,
दिल्ली

संदर्भ अंक-125 में कालू राम शर्माजी का लेख *किताब उपलब्ध करा देने से पढ़ना सुनिश्चित नहीं होता* पढ़ा। बहुत ही सुन्दर लेख। कई बार किताबों की उपलब्धता को ही पुस्तकालय मान लिया जाता है जबकि किताबें होना और उन पर काम होना, दोनों महत्व-पूर्ण हैं। कई बार बच्चों को किताबें घर पर पढ़ने के लिए भी दे दी जाती हैं मगर उन्होंने वह किताब पढ़ी या नहीं, इस पर चर्चा अक्सर नहीं होती है। सिर्फ किताबें देने से ही इस बात की पुष्टि नहीं होती है कि जिस उद्‌देश्य से यह दी गई है वह पूरा हो गया। इसके लिए यह ज़रूरी है कि बच्चे चाहे स्कूल में किताब पढें या घर पर, उनसे इस पर बात की जाए। और बात भी बहुत व्यवस्थित तरीके से होनी चाहिए, सिर्फ औपचारिकता के लिए नहीं, जैसे, किताब कैसी लगी। यदि बच्चा कहता है कि ‘अच्छी’ तो उस ‘अच्छी’ पर भी चर्चा होनी चाहिए। इसी तरह, हमारे प्रश्न भी ऐसे हों जिससे चर्चा आगे बढ़ सके जैसे, कहानी किसके बारे में थी, कहानी का घटना क्रम, कौन-सा पात्र सबसे अच्छा लगा, उसके बारे में राय और तुम उसकी जगह होते तो क्या करते आदि।

इन प्रश्नों के उत्तर बच्चा तभी दे पाएगा जब उसने कहानी को पूरा और ठीक-से पढ़ा होगा। दूसरी बात यह कि इसमें बच्चों को कठिन या नए शब्द का अर्थ सीधे नहीं बताया गया। कुछ और पढ़ने के बाद उसका अर्थ बच्चों ने ही निकाल लिया। भाषा में अर्थ-निर्माण की प्रक्रिया भी बहुत महत्वपूर्ण है। मगर कई बार या अक्सर ही बच्चों को उसका अर्थ बड़ों द्वारा या शिक्षक द्वारा बता दिया जाता है जिस वजह से उनके खुद से सोचने की आदत का विकास ठीक ढंग से नहीं हो पाता है। साथ ही, बच्चे जब खुद से करते हैं तो ‘मैंने किया’ या ‘मैं कर सकती हूँ’ की खुशी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

साथ ही, किताबों के चित्रों पर बच्चों से बात अवश्य करना चाहिए क्योंकि यदि किताबों में चित्र हैं तो वे भी किसी खास उद्‌देश्य से रखे गए हैं। ‘अड़ियल गाय’ वाला ही उदाहरण लेते हैं। अक्सर ‘अड़ियल’ शब्द का उपयोग हम इन्सान के लिए होते हुए देखते हैं मगर यहाँ पर गाय को अड़ियल बताया गया है। दूसरी बात, ‘गाय भी कभी अड़ियल सुनी है क्या?’ जैसे प्रश्न चर्चा के कितने सारे बिन्दु खोलते हैं।

प्रेरणा मालवीय
अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन,
भोपाल

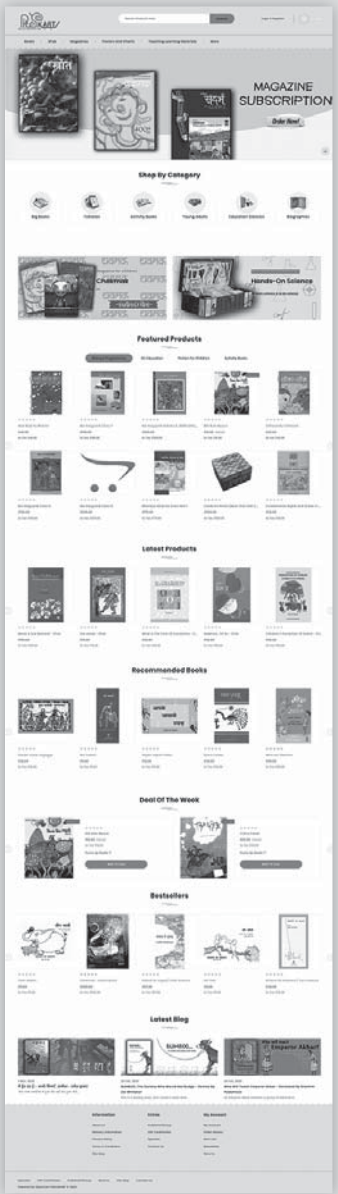

PitaraKART
ONE STOP EDUCATION STORE

पिटारा कार्ट

सिंगल क्लिक और आसान सर्च

एकलव्य की किताबें,
पत्रिकाएँ,
टी.एल.एम.,
शैक्षणिक सी.डी.,
चार्ट, पोस्टर
एवं साइंस किट...
आपकी पहुँच में...

जल्द ही देश भर की संस्थाओं और प्रकाशकों की चुनिन्दा सामग्री भी

www.pitarakart.in
पर विज़िट कीजिए।
अपना अकाउंट बनाइए।
आसान खरीदारी और सुरक्षित भुगतान

पिटारा कार्ट पर एकलव्य की किताबों व पत्रिकाओं की ई-बुक (E-pub) उपलब्ध हैं।

www.eklavya.in

जीवजगत में लिंग निर्धारण: क्या जानते हैं हम?

कोकिल चौधरी

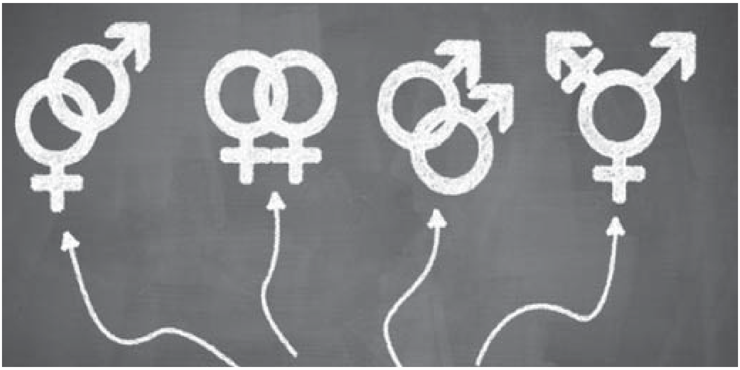

मनुष्यों सहित अधिकांश बहु-कोशिकीय जीवों में जीवन की निरन्तरता बनाए रखने में लैंगिक प्रजनन एक महत्वपूर्ण गुण है। पीढ़ियों की उत्तरजीविता में प्रजनन दरअसल पहला कदम होता है। जीवों में लैंगिक प्रजनन की इतनी अधिक उपस्थिति क्यों है, यह हमेशा से विवाद का विषय रहा है और इसकी व्याख्या के लिए कई सिद्धान्त प्रस्तुत किए गए हैं। सबसे संजीदा तर्क यह है कि लैंगिक प्रजनन के फलस्वरूप सन्तानों में विविधता उत्पन्न होती है। प्राकृतिक चयन की प्रक्रिया इस विविधता में से छँटाई करती है और इस तरह से जीवनक्षम प्रजातियों की उत्पत्ति होती है। किन्तु यह बात हर मामले में लागू नहीं होती। जैसे कई जीव अलैंगिक प्रजनन करते हैं, वहाँ यह तर्क लागू नहीं किया जा सकता। जहाँ अलैंगिक प्रजनन में कोई कोशिका स्वयं अपनी प्रतिलिपियाँ बनाती है, वहीं लैंगिक प्रजनन करने वाले सभी जीवों में दो लिंग होते हैं। लेकिन इस बात को लेकर काफी विविधता पाई जाती है कि इन दो लिंगों का निर्धारण कैसे होता है और ये किस रूप में प्रकट होते हैं। इस लेख में हम इस बात पर चर्चा करेंगे कि लैंगिक गुणधर्म कैसे तय होते हैं और जीवों में इन्हें तय करने की इतनी अलग-अलग प्रणालियाँ क्यों हैं। वैसे प्रणाली जो भी

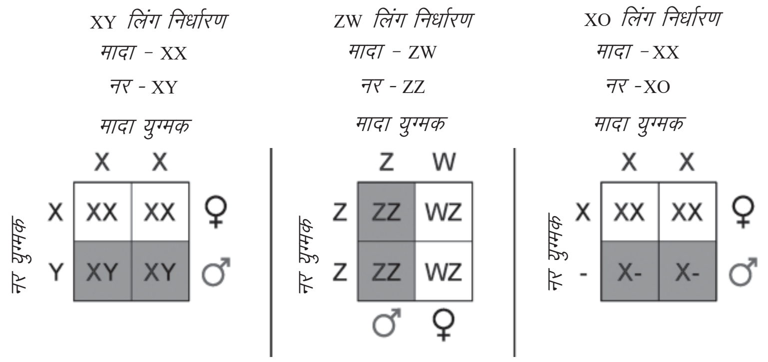

चित्र-1: *लिंग निर्धारण के तीन तरीकों का आरेखीय विवरण। XY प्रणाली मनुष्यों और अधिकांश स्तनधारियों में देखी जाती है - XX मादा हैं और नर XY हैं। ZW प्रणाली पक्षियों, तितलियों आदि में पाई जाती है - मादा ZW और नर ZZ हैं। XO प्रणाली मुख्यतः कीटों में पाई जाती है - मादा में XX गुणसूत्र होते हैं, लेकिन नर में केवल एक Y गुणसूत्र होता है (सभी अन्य गुणसूत्रों की दो प्रतियों को बरकरार रखते हुए)।*

हो, सबका अन्तिम नतीजा तो एक ही होता है। चलिए, संक्षेप में देखते हैं कि लिंग निर्धारण की अलग-अलग विधियाँ कौन-सी हैं, जिनका अध्ययन किया गया है और समझा गया है।

गुणसूत्र सम्बन्धी विधियाँ

1. XY लिंग निर्धारण

जीव विज्ञान की कक्षा में हमें यही पढ़ाया गया था कि मनुष्य में 23 जोड़ी गुणसूत्र होते हैं और आम तौर पर 23वीं जोड़ी में माँ से प्राप्त X गुणसूत्र होता है और पिता से प्राप्त X या Y गुणसूत्र होता है। अर्थात् हम सबमें 23वीं जोड़ी में दो गुणसूत्र होते हैं (XX या XY), बशर्ते कि प्रक्रिया में कोई गड़बड़ी न हुई हो। XX जोड़ी मादा की द्योतक होती है जबकि XY नर की।

लिंग निर्धारण की इस प्रणाली को XY प्रणाली कहते हैं, और यह हमारी सबसे जानी-पहचानी प्रणाली है। इस प्रणाली का उपयोग अधिकांश स्तनधारियों में होता है। स्तनधारियों के अलावा, यह व्यवस्था गुबरैलों और कुछ कीटों व पौधों में भी पाई जाती है। तो इस प्रणाली को और समझने से पहले इस प्रणाली की पृष्ठभूमि को थोड़ा जान लेते हैं।

तेइस जोड़ी गुणसूत्र मनुष्य की समस्त कोशिकाओं में पाए जाते हैं और इन्हीं पर जीन्स होते हैं। लेकिन अण्डाणु और शुक्राणु में प्रत्येक जोड़ी का एक गुणसूत्र ही पहुँचता है। अर्थात् प्रत्येक शुक्राणु और अण्डाणु में तेइस इकहरे गुणसूत्र होते हैं। अण्डाणु में 23वाँ गुणसूत्र सदैव X होता है जबकि शुक्राणु में यह X या

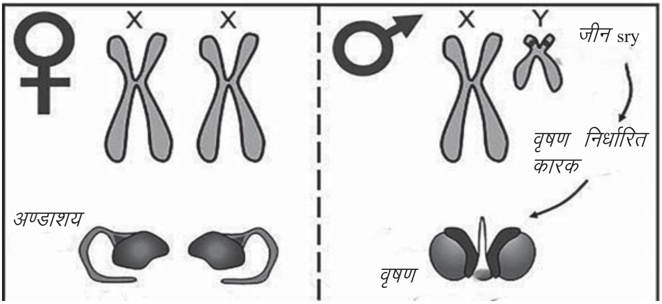

चित्र-2: लिंग निर्धारण निषेचन क्रिया के बाद होता है, जब भ्रूण या तो XX गुणसूत्र (महिला भ्रूण) या फिर एक X और एक Y गुणसूत्र (पुरुष भ्रूण) माँ और पिता से प्राप्त करता है। यदि विकासशील भ्रूण में Y गुणसूत्र है, तो इसमें sry जीन का लिंग निर्धारण क्षेत्र होता है। यह जीन एक प्रोटीन को एंकोड करता है जिसे ट्रांस्क्रिप्शन कारक के रूप में जाना जाता है। Y गुणसूत्र की उपस्थिति में, कोशिका टेस्टास्टरोन का स्राव करती है और महिलाओं में एस्ट्रोजन।

Y में से कोई एक होता है। निषेचन के दौरान जब अण्डाणु और शुक्राणु की मुलाकात होती है तो माता-पिता दोनों 22-22 गैर-लिंग गुणसूत्र का योगदान देते हैं और एक-एक लिंग-गुणसूत्र का - माता से हमेशा X तथा पिता से X या Y मिल सकता है। स्पष्ट है कि पिता का योगदान ही सन्तान का लिंग तय करता है।

निषेचन की क्रिया के बाद भ्रूण विकसित होने लगता है। शुरुआत में भ्रूण के लैंगिक अंग (प्रजनन अंग) लिंग-निरपेक्ष जननग्रन्थि के रूप में होते हैं। यह उस स्थान के नज़दीक एक छोटी-सी मोटी लकीर के रूप में होती है जहाँ आगे चलकर उदर बनने वाला है। अर्थात् स्व-निर्धारित विकल्प (यानी जब कोई अन्य क्रिया न की जाए) वास्तव में सदा मादा होती है। तो फिर नर लिंग के निर्माण की बात कहाँ से आती है? यह होता है Y गुणसूत्र पर उपस्थित एक जीन SRY के कारण। SRY दरअसल एक ट्रांस्क्रिप्शन कारक है। इसका मतलब यह होता है कि यह एक ऐसा आनुवंशिक तत्व है जो अन्य जीन्स की क्रिया यानी अभिव्यक्ति को चालू करवा सकता है। तो, किसी विकसित होते जीव में 'नर' जीन का सक्रिय होना SRY नामक मास्टर स्विच पर निर्भर करता है। अर्थात् इकलौते Y गुणसूत्र की उपस्थिति नर-निर्माण का रास्ता खोल देती है। यदि Y गुणसूत्र (यानी SRY जीन) न हो तो कोशिका टेस्टोस्टेरोन की बजाय एस्ट्रोजन का स्राव करती है और XX सन्तान में मादा प्रजनन अंग बनते हैं।

इस तरह के विभेदन का एक उदाहरण क्लाइनफेल्टर सिंड्रोम में देखा जा सकता है। इसमें व्यक्ति में

दो X तथा एक Y गुणसूत्र पाया जाता है लेकिन इनमें वृषण का विकास होता है और ये सामान्यत: 'नर' नज़र आते हैं। दूसरी ओर, स्वायर सिंड्रोम (जहाँ SRY जीन में उत्परिवर्तन हो जाता है) के मरीज़ बाहर से तो मादा नज़र आते हैं किन्तु उनमें अण्डाशय नहीं बनते और वे वंध्य होते हैं।

पहले कई जीव वैज्ञानिक लिंग के बारे में स्तनधारियों के जाने-माने उदाहरणों के आधार पर सोचने के आदी थे। वे यह मानकर चलते थे कि लिंग-गुणसूत्रों के माध्यम से लिंग निर्धारण ही सामान्य तरीका है। उन्हें लगता था कि अन्य सारे वैकल्पिक तरीके अजूबे और असामान्य हैं। लेकिन अब प्रकृति में बेहिसाब विविधता के मद्देनज़र हम जानते हैं कि लिंग निर्धारण की कई व्यवस्थाएँ अस्तित्व में हैं।

2. ZW लिंग निर्धारण

यह व्यवस्था पक्षियों, तितलियों, कुछ सरिसृपों में पाई जाती है और XY के विपरीत ढंग से काम करती है: मादा पक्षी 'XY' होंगे और नर पक्षी 'XX'। चूँकि इस व्यवस्था के लिए भी X और Y अक्षरों का उपयोग करना भ्रामक हो सकता है, इसलिए इन गुणसूत्रों को Z और W कहते हैं। इसके अनुसार नर 'ZZ' होते हैं और मादा 'ZW'। यहाँ माता का योगदान सन्तान का लिंग तय करता है। जिस तरह से स्तनधारियों में Y गुणसूत्र पर नर-निर्धारक SRY पाया जाता है, उसी तरह से पक्षियों में W गुणसूत्र पर दो मास्टर स्विच FET1 और ASW पाए जाते हैं जो सन्तान में मादा अंगों के विकास के लिए ज़रूरी होते हैं। इनकी अनुपस्थिति में सन्तान हमेशा नर बनती है।

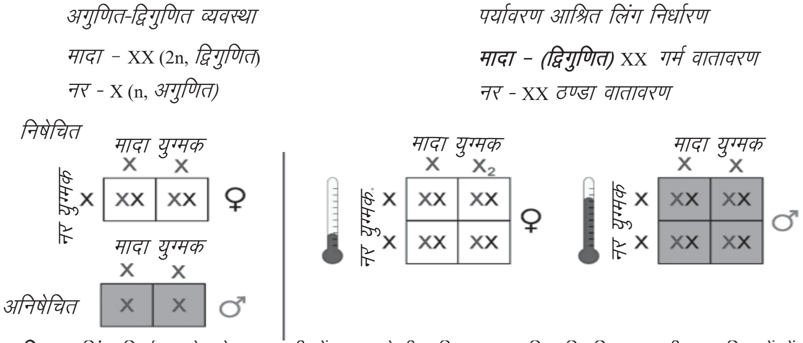

चित्र-3: लिंग निर्धारण के दो अन्य तरीकों का आरेखीय विवरण। अगुणित-द्विगुणित प्रणाली मधुमक्खियों में - मादा में XX गुणसूत्र होते हैं, जबकि नर में एक ही Y होता है। लेकिन इस मामले में नर में हर गुणसूत्र की एक ही प्रति होती है। पर्यावरण आश्रित लिंग निर्धारण कुछ सरीसृपों, मगरमच्छों आदि में पाया जाता है जिसमें आसपास के वातावरण का तापमान सन्तानों के लिंग को निर्धारित करता है।

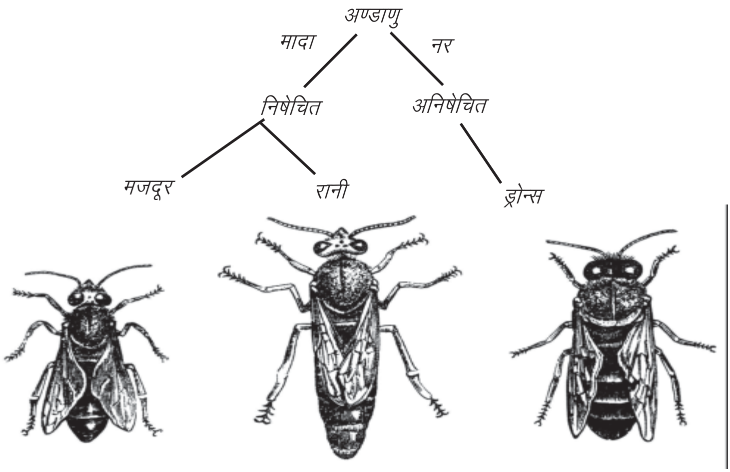

चित्र-4: मधुमक्खियों में जैनेटिक रूप से कार्य-नियति निर्धारण।

3. XO लिंग निर्धारण

यह व्यवस्था कई कीटों में देखी गई है। इस प्रणाली में भी मादा तो 'XX' ही होती है किन्तु नर में Y गुणसूत्र नहीं होता, बल्कि उनमें सिर्फ एक X गुणसूत्र ही पाया जाता है। अर्थात् वे 'XO' होते हैं। उदाहरण के लिए, टिड्डों में कोई Y गुणसूत्र नहीं होता। यहाँ 'O' का मतलब है कोई गुणसूत्र नहीं पाया जाना। परिणाम यह होता है कि नर के शुक्राणु में या तो X गुणसूत्र होगा या कोई गुणसूत्र नहीं होगा। दोनों तरह के शुक्राणु बनने की सम्भाविता 50-50 प्रतिशत होती है। इस व्यवस्था में भी, XY प्रणाली के समान, सन्तान के लिंग का निर्धारण नर के योगदान से होता है।

अन्य तरीके

1. अगुणित-द्विगुणित व्यवस्था

अगुणित-द्विगुणित प्रणाली का एक प्रमुख उदाहरण मधुमक्खियों का है। मधुमक्खियों में अनिषेचित अण्डे (जिनमें गुणसूत्रों का एक सेट ही होता है, और इन्हें अगुणित या अर्धसूत्री कहा जाता है) विकसित होकर नर बनते हैं जबकि निषेचित अण्डे (जिनमें गुणसूत्रों के दो-दो सेट होते हैं, यानी द्विगुणित) मादा के रूप में विकसित होते हैं। गौर करने वाली बात यह है कि यह प्रणाली XO प्रणाली से भिन्न है, जिसमें सन्तान को गैर-लिंग गुणसूत्र के दो सेट मिलते हैं चाहे वह किसी भी लिंग की हो। किन्तु अगुणित-द्विगुणित प्रणाली में

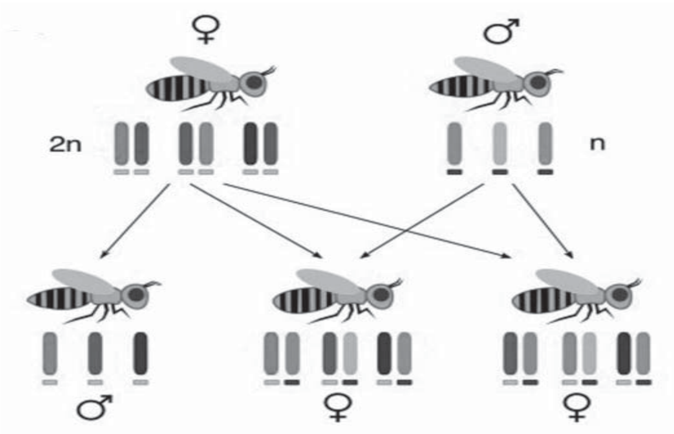

चित्र-5: मधुमक्खियों में लिंग निर्धारण। मधुमक्खियों में अगुणित-द्विगुणित निषेचित अण्डे अपनी माँ से गुणसूत्र की एक जोड़ी और अपने पिता से गुणसूत्र की एक जोड़ी प्राप्त करते हैं, और हमेशा मादा होते हैं। अनिषेचित अण्डे माँ के आधे गुणसूत्र प्राप्त करते हैं और हमेशा नर होते हैं; नर का कोई पिता नहीं होता है।

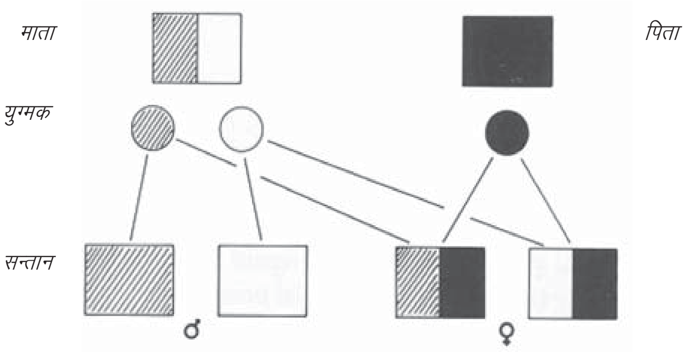

चित्र-6: प्रत्येक सन्तान और मादा के बीच गुणसूत्र सम्बन्ध। रानी के मात्र एक ही नर के साथ समागम में प्रत्येक मादा सन्तान को उसके पिता के सभी गुणसूत्र और माँ के आधे गुणसूत्र मिलते हैं। इस प्रकार, सारी मादा सन्तानें एक-दूसरे से 75 प्रतिशत तक सम्बन्धित होती हैं जबकि माँ से 50 प्रतिशत तक ही।

नर को लिंग और गैर-लिंग, दोनों तरह के गुणसूत्रों की एक प्रतिलिपि ही मिलती है।

मधुमक्खियों के रोचक संसार के बारे में थोड़ी और चर्चा करते हैं और देखते हैं कि छत्ते में किसी मधुमक्खी की नियति - वह मजदूर बनेगी या रानी - जेनेटिक रूप से कैसे निर्धारित होती है।

मधुमक्खियों की बस्तियाँ एक इकलौती उर्वर रानी के इर्द-गिर्द गठित होती हैं और नर ड्रोन्स तथा मादा मजदूरों की पूरी फौज इसकी सेवा में लगी रहती है। रानी बड़ी संख्या में अण्डे देती है। इनमें से कुछ निषेचित होते हैं। रानी तय करती है कि किसी अण्डे का निषेचन होगा या नहीं।

मादा मधुमक्खियाँ (रानी और मजदूर) निषेचित अण्डे से बनती हैं। प्रजननक्षम नर मधुमक्खियाँ हमेशा अनिषेचित अण्डों से बनती हैं, अर्थात् इस प्रणाली में नर का कोई पिता नहीं होता और वे नर सन्तानें पैदा भी नहीं कर सकते हैं। इसके अलावा, यदि रानी मात्र एक नर के साथ समागम करे, तो उसकी सारी मादा सन्तानों में 75 प्रतिशत जीन्स एक जैसे होते हैं क्योंकि उन सबको पिता के जीन्स का आधा नहीं बल्कि पूरा सेट मिलता है। (जबकि मनुष्यों में भाई-बहनों के बीच 50 प्रतिशत जीन्स ही एक समान होते हैं)।

तो हमने देखा कि यह एक निहायत रोचक मामला है जहाँ जेनेटिक ढंग से निर्धारित लिंग उस मधुमक्खी की समुदाय में भूमिका का भी निर्धारण करता है।

2. पर्यावरण आश्रित लिंग निर्धारण

और अन्त में लिंग निर्धारण की उन प्रणालियों की चर्चा करते हैं जो गुणसूत्रों पर निर्भर नहीं हैं। मगरमच्छों, घड़ियालों, अधिकांश कछुओं और कुछ मछलियों में अण्डों की परवरिश जिस वातावरण में होती है, कुछ संवेदनशील अवधियों में उसका तापमान सन्तानों के लिंग का निर्धारण करता है। अधिक तापमान पर अण्डों से निकलने वाली सन्तानें मादा होती हैं। दूसरी ओर, यदि तापमान कम रहे तो भ्रूण का विकास धीमी गति से होता है और वह नर बन जाता है।

वैसे यह नियम सभी प्रजातियों पर लागू नहीं होता और कभी-कभी उल्टा नियम भी चलता है। या यह भी हो सकता है कि इन्तहाई तापमान (चाहे कम या अधिक) एक लिंग को जन्म दे जबकि मध्यम तापमान दूसरे लिंग को।

कुछ घोंघे और मछलियाँ तो अपने जीवनकाल के बीच में पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुसार लिंग परिवर्तन भी कर सकते हैं। इस प्रक्रिया को लिंग-पलट कहते हैं। लिंग निर्धारण करने के मामले में कई अन्य

पर्यावरणीय उद्दीपन भी पहचाने गए हैं। जैसे एम्फीपोडा कुल के समुद्री जीवों में और बार्नेकल्स में प्रकाश-अवधि के अनुसार लिंग तय होता है जबकि मूंगा चट्टानों में रहने वाली कुछ मछलियों तथा लिम्पेट्स में सामाजिक कारक लिंग का निर्धारण करते हैं। अलबत्ता, यह स्पष्ट नहीं है कि ये कारक लिंग के विकास को कैसे प्रभावित करते हैं।

3. कुछ और

लिंग निर्धारण की कुछ अन्य विधियों पर भी शोध जारी है। जैसे बहु-जीन आधारित लिंग निर्धारण (PSD)। इसमें लिंग निर्धारण का कोई एक मास्टर नियामक नहीं होता बल्कि कई सारे जीन्स और गुणसूत्र मिलकर सन्तान के लिंग का निर्धारण करते हैं। उदाहरण के लिए, कैंटालूप फल में चार लिंग बनते हैं। ज़ेब्रा मछली भी PSD के सहारे रहती है।

अधिकांश पौधों और गैस्ट्रोपोड्स (घोंघे वगैरह) तथा केंचुओं में एक ही जीव में नर व मादा, दोनों प्रजनन अंग पाए जाते हैं। इन्हें उभयलिंगी कहा जाता है। ये एक-दूसरे के साथ समागम कर सकते हैं और लैंगिक प्रजनन में जो जेनेटिक सम्मिश्रण होता है, उससे लाभ ले सकते हैं। अलबत्ता, यदि समागम के लिए साथी उपलब्ध न हो तो ये स्व-निषेचन भी कर सकते हैं। इस सन्दर्भ में क्लाउन मछली क्रमिक उभयलिंगी होती है। ये पैदा तो नर के रूप में होती हैं किन्तु आगे चलकर मादा में परिवर्तित हो जाती हैं।

जैव-विकास से मिले कुछ संकेत

हमने लिंग निर्धारण की विभिन्न व्यवस्थाएँ देखीं। एक महत्वपूर्ण सवाल यह उठता है कि जब लैंगिक प्रजनन एक बार अस्तित्व में आ गया तो यह इतनी अलग-अलग तरह से क्यों आगे बढ़ा और यह हमें किस तरह प्रभावित करता है। जवाब अभी तक हमें मुँह चिढ़ा रहे हैं।

कुछ अध्ययन बताते हैं कि 'XY' और 'ZW' एक साझा पूर्वज के ज़रिए आपस में जुड़े हुए हैं। प्लेटीपस का उदाहरण इस बात का समर्थन करता है। प्लेटीपस में पूरे 10 लिंग-गुणसूत्र होते हैं (इनमें नर XY नहीं बल्कि XY XY XY XY XY होते हैं)। यह काफी हद तक पक्षियों के Z गुणसूत्र के समान होता है किन्तु तकनीकी रूप से 'XY' प्रणाली के नियमों के अन्तर्गत काम करता है। और मज़ेदार बात यह है कि प्लेटीपस में SRY का अभाव होता है। लिहाज़ा, यह कह सकते हैं कि प्लेटीपस इन दो प्रणालियों के बीच की कड़ी है।

दूसरे किस्म के प्रमाण Y गुणसूत्र के विश्लेषण से मिले हैं। यह सुझाव दिया गया है कि Y गुणसूत्र का विकास X गुणसूत्र से हुआ है और विभेदन की किसी घटना ने इन्हें

अलग-अलग भूमिकाएँ प्रदान कर दीं। Y गुणसूत्र दरअसल X गुणसूत्र से काफी छोटा होता है और ऐसा लगता है कि इसने X गुणसूत्र के सारे अनावश्यक जीन्स को तिलांजलि दे दी है। एक परिकल्पना यह भी है कि 'XO' लिंग निर्धारण प्रणाली का विकास Y गुणसूत्र को पूरी तरह तिलांजलि देकर हुआ है, जिसे मूलत: उसकी अकार्यक्षमता की वजह से छोड़ दिया गया।

सारांश

जीव विज्ञान रायता फैलाने वाले अपवादों और अतिरिक्त नियमों का विज्ञान है। जैसा कि ऊपर की चर्चा से ज़ाहिर है, मात्र X और Y लिंग-गुणसूत्रों की उपस्थिति पूरी तरह किसी जीव के लिंग को परिभाषित नहीं करती। कम-से-कम टिड्डियों और चींटियों में तो यह निश्चित तौर पर गलत है और पक्षियों में एकदम उल्टी व्यवस्था है। कुछ जीव ऐसे भी हैं जिनमें X या Y गुणसूत्र होते हैं लेकिन उनके लिंग का निर्धारण न तो शुक्राणु करते हैं, न अण्डाणु बल्कि भ्रूण का पर्यावरण करता है। जैव-विकास ने सजीवों को यह तय करने के लिए कई तरीके दिए हैं कि कोई जीव नर होगा या मादा। और हर प्रणाली प्रजाति के लिए विशिष्ट ढंग से लाभकारी होती है। तो, 'नर' और 'मादा' की अवधारणा उतनी सरल नहीं है जितनी हमने कभी सोची थी और इस विभाजन के बारे में नए सिरे से विचार करने का वक्त आ गया है।

कोकिल चौधरी: *संदर्भ* पत्रिका से सम्बद्ध हैं।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: सुशील जोशी: *एकलव्य* द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

भविष्य

(जो अभी से दिख रहा है, टुकड़ों-टुकड़ों में)

चारुदत्त नवरे

धरातल के नीचे (Underworlds)

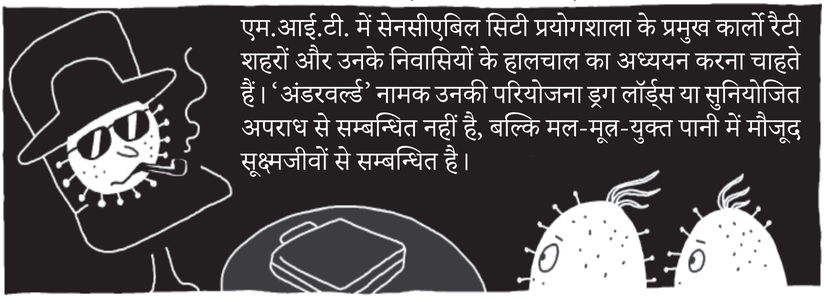

एम.आई.टी. में सेनसीएबिल सिटी प्रयोगशाला के प्रमुख कार्लो रैटी शहरों और उनके निवासियों के हालचाल का अध्ययन करना चाहते हैं। ‘अंडरवर्ल्ड’ नामक उनकी परियोजना ड्रग लॉर्ड्स या सुनियोजित अपराध से सम्बन्धित नहीं है, बल्कि मल-मूत्र-युक्त पानी में मौजूद सूक्ष्मजीवों से सम्बन्धित है।

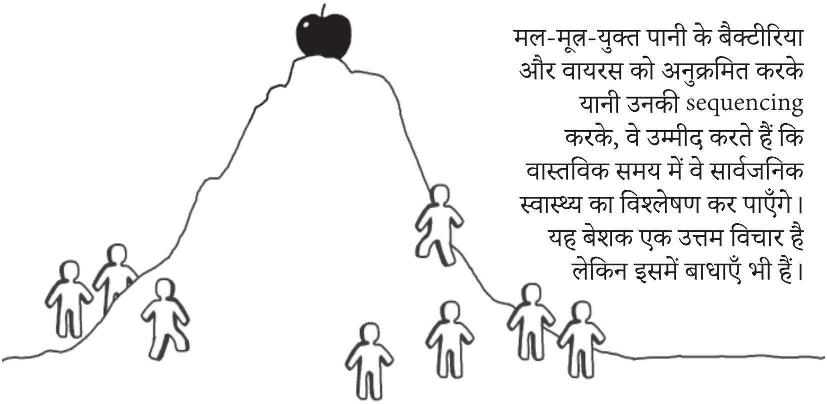

मल-मूत्र-युक्त पानी के बैक्टीरिया और वायरस को अनुक्रमित करके यानी उनकी sequencing करके, वे उम्मीद करते हैं कि वास्तविक समय में वे सार्वजनिक स्वास्थ्य का विश्लेषण कर पाएँगे। यह बेशक एक उत्तम विचार है लेकिन इसमें बाधाएँ भी हैं।

कुछ सूक्ष्मजीव दूसरों की तुलना में काफी कम मात्रा में पाए जाते हैं। कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में ही जीवित रह पाते हैं। इसके परिणामस्वरूप ऐसे रोगाणुओं के बारे में पता लगाना कठिन हो जाता है।

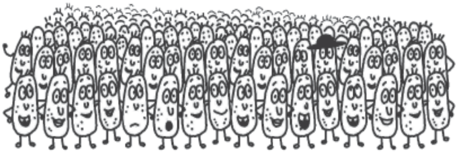

हालाँकि, इन बाधाओं को पार करने पर हम सार्वजनिक स्वास्थ्य और मरक-विज्ञान (epidemiology) को एक नए नज़रिए से देख पाएँगे।

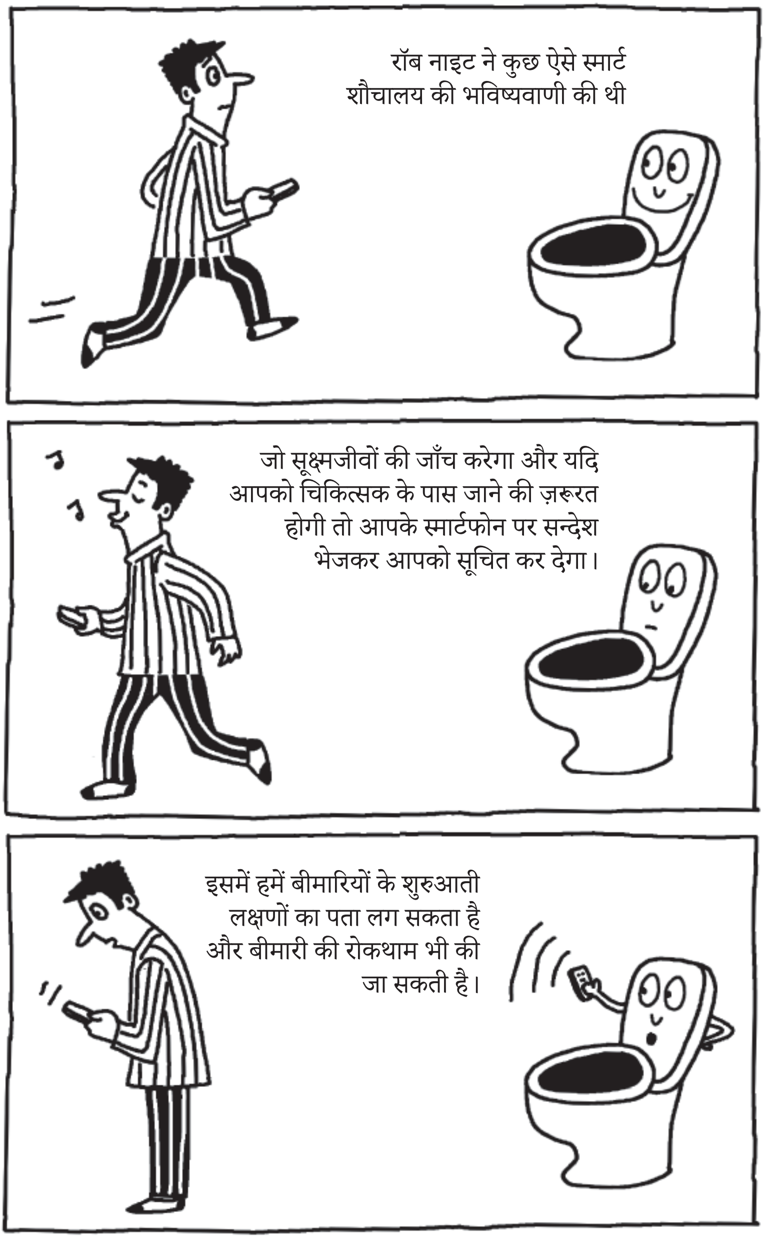

रॉब नाइट ने कुछ ऐसे स्मार्ट शौचालय की भविष्यवाणी की थी
जो सूक्ष्मजीवों की जाँच करेगा और यदि आपको चिकित्सक के पास जाने की ज़रूरत होगी तो आपके स्मार्टफोन पर सन्देश भेजकर आपको सूचित कर देगा।
इसमें हमें बीमारियों के शुरुआती लक्षणों का पता लग सकता है और बीमारी की रोकथाम भी की जा सकती है।

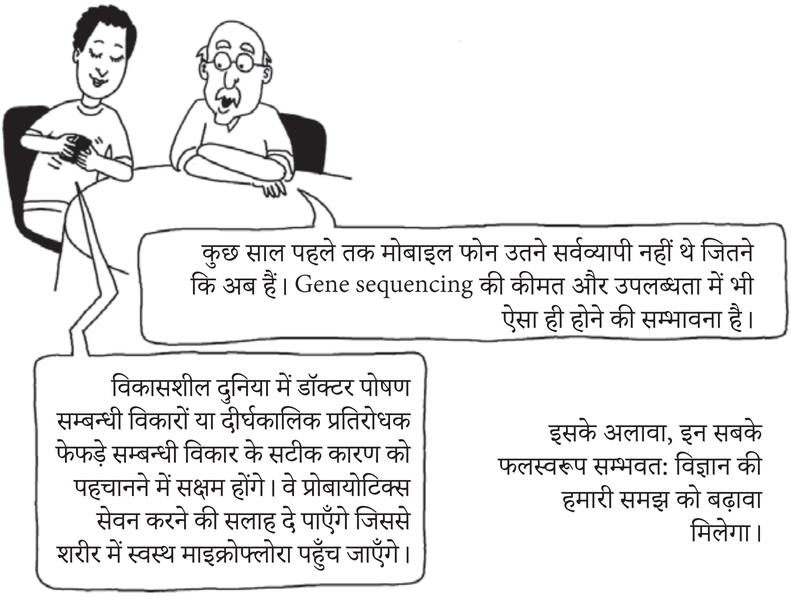

हवा में कुछ है

उत्तरी एरिज़ोना विश्वविद्यालय में प्रोफेसर ग्रेग कैपोरासो की प्रयोगशाला मानव निर्मित वातावरणों के सूक्ष्मजीवों का अध्ययन करती है। जब हम इसके बारे में सोचते हैं, तो समझ में आता है कि दरअसल हम काफी ज़्यादा समय घर के अन्दर ही व्यतीत करते हैं। उससे कहीं ज़्यादा जितना 50,000 साल पहले अफ्रीका में रहने वाले हमारे पूर्वज व्यतीत किया करते थे। उद्विकास उतनी तेज़ी-से नहीं होता जितनी तेज़ी-से संस्कृति विकसित होती है।

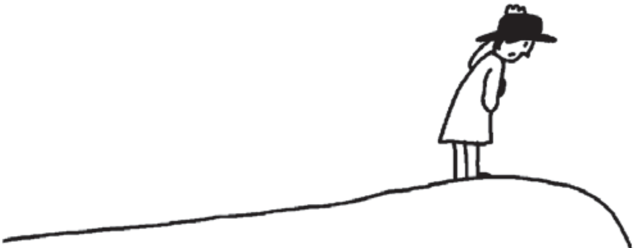

जब हम ऊँचाई से नीचे देखते हैं तो हमें अभी भी चक्कर आते हैं। ऊँचाई का डर मानव मस्तिष्क में निहित है, सम्भवतः क्योंकि इसने पेड़ों पर रहने वाले हमारे पूर्वजों को जीवित रहने का लाभ प्रदान किया। हालाँकि, जब हम शराब पीकर गाड़ी चलाने वाले होते हैं, उस वक्त हमें डर नहीं लगता। निश्चित रूप से हम जानते हैं कि यह गलत है लेकिन हम ऐसा 'महसूस' नहीं करते। उद्विकास अभी यहाँ तक नहीं पहुँचा है।

इसी तरह घर के अन्दर रहने की हमारी आदत तक भी उद्विकास शायद नहीं पहुँच पाया। माइक्रोबियल परिदृश्य की बेहतर समझ से हम शायद ज़्यादा स्वास्थ्य-वर्धक मानव निर्मित वातावरण बना पाएँ।

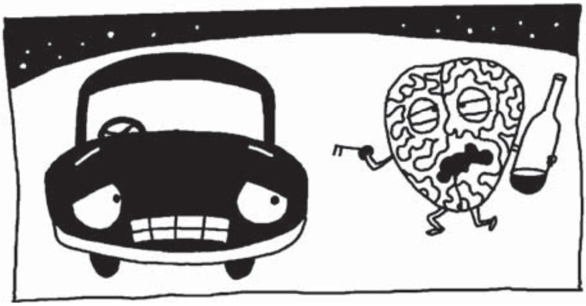

माउंट सिनाई स्थित आईकान स्कूल ऑफ मेडिसिन में प्रोफेसर होसे क्लेमेंटे और प्रोफेसर जेरेमीयाह फेथ की प्रयोगशालाएँ, सूजन-सम्बन्धी आँत रोग (इनफ्लेमेटरी बाउल डिसीज़, आईबीडी) और खाद्य एलर्जी के बारे में अध्ययन करती हैं। वे जर्म-मुक्त चूहों में आँत के सूक्ष्मजीवों पर आहार के प्रभाव का भी अध्ययन करते हैं, और इसके उलटे प्रयोग भी करते हैं। उनके प्रयोगों में अल्सरेटिव कोलाइटिस जैसी बीमारियों के मामलों में एक स्वस्थ व्यक्ति के विष्ठा-प्रत्यारोपण से सुधार देखा गया है जिससे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि भविष्य में सूक्ष्मजीवीय पारिस्थितिकी बहुत-से प्रतिरक्षा-विकार और एलर्जी के इलाज के लिए एक महत्वपूर्ण समाधान हो सकती है।

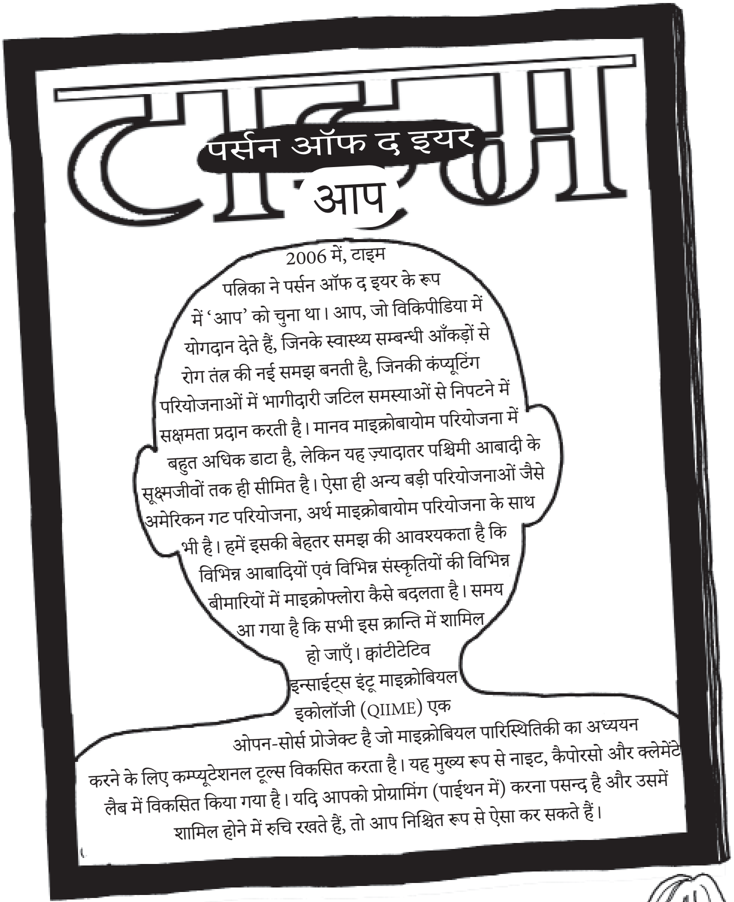

ब्रह्माण्ड में अनुमानित 10^{24} तारे हैं और हमारे ग्रह पर 10^{30} बैक्टीरिया हैं, और मेरा यह तर्क है कि एक अनोखा कार्य करने वाली माइक्रोबियल प्रजाति की खोज, एक तारे की खोज जितनी ही दिलचस्प होगी।

– प्रो. जेनेट जैनसन।

चारुदत्त नवरे: होमी भाभा सेंटर फॉर साइंस एजुकेशन (एच.बी.सी.एस.ई.), मुम्बई में शोध छात्र हैं। आइकेन चिकित्सा स्कूल, न्यू यॉर्क और एन.सी.एल, पुणे से शोध का अनुभव। उनके द्वारा तैयार की गई यह पुस्तक *एकलव्य* से शीघ्र प्रकाशित होने वाली है।

सभी चित्र: रेशमा बर्वे: अभिनव कला महाविद्यालय, पुणे से वाणिज्यिक कला में पढ़ाई। कई पुस्तकों का चित्रांकन किया है।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: कोकिल चौधरी: *संदर्भ* पत्रिका से सम्बद्ध हैं।

हम वैसे ही पढ़ाते हैं, जैसा हमें पढ़ाया गया था

शेषागिरी केएम राव

"औसत शिक्षक बताता है। अच्छा शिक्षक समझाता है। श्रेष्ठ शिक्षक करके बताता है। महान शिक्षक प्रेरित करता है।"
- विलियम आर्थर वार्ड

सितम्बर 1993 - दी वैली स्कूल में मैं प्रिंसिपल के कमरे में उनके सामने बैठा हूँ। मैं एक शिक्षक बनना चाहता हूँ और अपना जीवन बच्चों के साथ बिताना चाहता हूँ। कुछ है जो मुझे बताता है कि तब मेरा जीवन ज़्यादा सार्थक होगा। मैं अपनी दो साल पुरानी नौकरी छोड़ना चाहता हूँ, जहाँ मेरा काम था सम्पन्न किसानों के लिए ट्रैक्टर निर्माण, जिनसे मैं कभी नहीं मिला हूँ।

जी हाँ, मैंने बारहवीं के बाद मेकेनिकल इंजीनियरिंग का कोर्स किया था, लेकिन वह तो साथियों के दबाव और परिवार की अपेक्षाओं के कारण था। अब मैं चाहता हूँ कि बदलाव हो। मैं हमारी बेमज़ा शिक्षा व्यवस्था से नाराज़ हूँ जो हमें मशीनी ढंग से सीखने को धकेलती है। मैं अपने अन्दर आदर्शवाद का उफान महसूस कर रहा हूँ और शिक्षक बनकर दुनिया को बदलना चाहता हूँ।

तब मेरा मानना था, और आज भी है, कि शिक्षा वास्तव में एक दूसरी दुनिया को मुमकिन बनाने का शुरुआती बिन्दु है। लिहाज़ा, मैंने तकरीबन 20 स्कूलों के बारे में पता किया और फिर इस वाले में आ पहुँचा। उन 20 स्कूलों ने मुझसे बी.एड. या एम.एड. की उपाधि की माँग की थी। कहाँ से लाता मैं? उस समय मुझे नहीं लगा था कि मुझे इनकी ज़रूरत है। मैं तो पढ़ाने के विचार को टटोल रहा था और मुझे लग रहा था कि मैं एक अच्छा शिक्षक बनूँगा।

जिस ट्रैक्टर निर्माण कम्पनी में मैं काम करता था, वहाँ मेरे बॉस ने अपना फैसला सुना दिया था कि मैं पलायनवादी हूँ, यानी कि मैं ज़िन्दगी से भाग रहा हूँ। जब मैं उन्हें समझाने

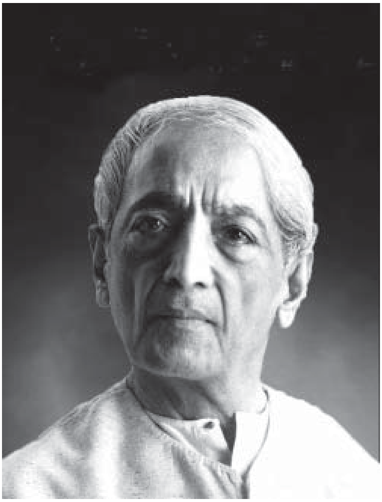

उनके कमरे में गया कि मैं क्यों कुछ और करना चाहता हूँ तो उन्होंने बहुत अनमने ढंग से सिर हिलाते हुए कहा था, “तुम अभी बहुत छोटे हो और समझ नहीं पाओगे कि तुम क्या कर रहे हो।” उन्होंने मुझे खारिज कर दिया था। उस समय मेरे पास कोई जवाब नहीं था यानी ज़िन्दगी से पलायन करने के उनके इस ताने का कोई मुँहतोड़ जवाब नहीं था। क्या मैं सचमुच पलायनवादी हूँ? यह सवाल बार-बार मेरे सामने आता रहा।

स्कूल शिक्षक बनने के कुछ महीने बाद, मैं ज़्यादा आत्मविश्वास से उनके पास गया और कहा, “मैं ज़िन्दगी से भाग नहीं रहा हूँ, भागकर ज़िन्दगी में जा रहा हूँ, और ऐसा करके मैं ज़्यादा खुश हूँ।” उन्हें फिर भी समझ नहीं आया कि मैं एक स्कूल में शिक्षक क्यों बना हूँ। मुझे परवाह नहीं थी कि उन्हें समझ नहीं आया। मैंने निर्णय कर लिया था और इस नई यात्रा को लेकर उत्साहित था। अपने दिल की बात जो सुन रहा था मैं।

जब मैं शिक्षक बना

जिन प्रिंसिपल की मेज़ के दूसरी ओर मैं बैठा था, उन्होंने नम्रता-से मगर थोड़ा झिझक के साथ कहा, “हमें एक गणित शिक्षक की तलाश है। हम तुम्हें दो महीने देखेंगे और फिर फैसला करेंगे...अव्वल तो बच्चे तुम्हें पसन्द करें।” मैंने राहत की साँस ली कि किसी ने बी.एड. या एम.एड. का सार्टिफिकेट नहीं माँगा।

दो महीने बाद उन्हें मुझे नौकरी देने में कोई दिक्कत नहीं थी। मेरा ख्याल है, मैं ठीक-ठाक शिक्षक था। अपने शिक्षण को लेकर मेरी यही छवि है।

अच्छी बात यह थी कि कोई मेरी कक्षाओं की निगरानी नहीं करता रहता था। मुझसे हर हफ्ते पाठ योजना प्रस्तुत करने को नहीं कहा जाता था, जैसा कि कई निजी स्कूलों में शिक्षकों को करना होता है। स्कूल प्रबन्धन को हम पर भरोसा था। यह दार्शनिक व शिक्षक जिड्डू कृष्णमूर्ति के आदर्शों से प्रेरित एक प्रगतिशील स्कूल था। लिहाज़ा, हम शिक्षकों को प्रयोग करने के लिए ज़्यादा गुंजाइश थी।

मैं मुख्यत: मिडिल व हाई स्कूल में गणित और भौतिकी पढ़ाता था। थोड़े समय के लिए मैंने प्रायमरी कक्षाओं

को भी पढ़ाया था। यह एकदम नया अनुभव था और मैंने बहुत कुछ सीखा। हर क्षण जीवित होने का एहसास मिलता था। सब कुछ बहुत ताज़गी भरने वाला था। मुझे समझ में आया कि शिक्षण खुद को शिक्षित करने का बढ़िया तरीका है। हम खुद के बारे में और जिस दुनिया में हम रहते हैं, उसके बारे में दिलचस्प और बुनियादी सवाल पूछा करते थे। इन सवालों ने हमें एक भरपूर जीवन जीने में समर्थ बनाया।

चन्ना से प्रेरणा लेकर मैंने वे तमाम तकनीकें आज़माईं जिनका इस्तेमाल वे एक शिक्षक के नाते किया करते थे - जैसे बुनियादी बातें पढ़ाना, छात्रों को सोचने को विवश करना। और फिर उन्हें धकेलना और ठेलना, लेकिन पका-पकाया ज्ञान कभी न परोसना। और उन्हें गणित के इतिहास की दिलकश और पेचीदा कहानियाँ सुनाना। कक्षा में इस इतिहास की बात करना मैं कभी नहीं भूलता था। वैली स्कूल के पुस्तकालय ने मुझे अच्छी किताबें उपलब्ध कराईं और मैंने खूब पढ़ीं। साथी शिक्षकों के साथ भी रोचक वार्तालाप हुआ करते थे।

जब भी सम्भव होता, मैं छात्रों को ऐतिहासिक पगडण्डियों पर ले जाता। हमने पायथागोरस प्रमेय, त्रिकोणमिति, विश्लेषणात्मक ज्यामिति, लॉगरिद्म से सम्बन्धित प्राचीन सवाल हल किए, और गणित में विरोधाभासों पर खूब चर्चा की। इनमें से कई चर्चाओं को मैंने अपनी वर्कशीट्स में शामिल किया था और प्रश्न पत्र बनाते समय उन पर आधारित सवाल देने की भी कोशिश करता था। ब्लैकबोर्ड को शिक्षण की सहायक सामग्री के तौर पर इस्तेमाल करते हुए मैं जो कुछ भी करता था, वह मैंने चन्ना को देख-देखकर सीखा था। मेरी कोशिश होती थी कि ब्लैकबोर्ड का उपयोग अच्छे से और साफ-सुथरे ढंग से करूँ।

और तो और, मैंने 'वैदिक गणित' में भी चहलकदमी की थी, उसकी कुछ शॉर्टकट विधियों का प्रदर्शन करके बच्चों को उसके प्रति उत्साहित भी किया था, और साथी शिक्षकों के साथ इस बात पर बहसें भी की थीं कि एक गणित प्रणाली के रूप में यह (वैदिक गणित) कितना प्रामाणिक है। क्या इसका उद्‌गम सचमुच वेदों में है, जैसा कि कुछ लोग दावा करते हैं? मुझे याद है, मैं स्थानीय आर.एस.एस. शाखा द्वारा बैंगलुरु में चामराजपेट में आयोजित वैदिक गणित की एक कार्यशाला में भी शरीक हुआ था। हम त्रिघात समीकरण (cubic equations) छुड़ाने की कोशिश कर रहे थे और 'जादुई शॉर्टकट' पूरे शबाब पर थे। श्रोता कई बार वाह-वाह कर उठे थे। किन्तु जब मैंने स्रोत व्यक्ति से कहा कि वे बोर्ड पर उनके द्वारा लिखी गई त्रिघात समीकरण में 'X' का गुणांक बदल दें, तो वैदिक विधि गड़बड़ा गई। इससे इस दावे

पर सवाल उठ खड़ा हुआ कि यह गणित वेदों से है। बहरहाल, मेरे छात्र मेरे द्वारा सिखाई गई हर बात को लपक लेते थे, बशर्ते कि वह काम करे।

थोड़ा भटकाव तो होगा, किन्तु मुझे यह बताना चाहिए कि वैदिक गणित को लेकर यह चर्चा एक ज़्यादा व्यापक सवाल की द्योतक है। सवाल का सम्बन्ध सत्य की तलाश और शिक्षा के लिए उसके निहितार्थ से है। मैंने प्रमाण सम्बन्धी अध्याय में संक्षेप में इसका इशारा किया था। वहाँ मैंने कहा था कि गणितीय प्रमाण एक विशिष्ट सन्दर्भ (निर्देश तंत्र या फ्रेम ऑफ रेफरेंस) में किसी दावे की सत्यता स्थापित करने का प्रयास होता है।

जैसा कि हमने देखा है, गणित का अध्ययन हमें गणितीय सत्यों (जैसे प्रमेयों) की समझ हासिल करने में मदद करता है। किन्तु गणित प्रकृति के सत्यों को उजागर करने का एक बढ़िया औज़ार भी है। ऐसा क्यों है, हम नहीं जानते। गणितीय तर्क और विचार शैली की ताकत गणित को यह समझने का भी एक अपरिहार्य औज़ार बना देती है कि समाज कैसे काम करता है। मैं यह सब पहले भी कह चुका हूँ, इसलिए आगे बढ़ने की इजाज़त दीजिए।

मैं अमरीकी दार्शनिक और शिक्षा विचारक नील पोस्टमैन की बात दोहराना चाहूँगा। उन्होंने कहा था कि शिक्षा का उद्देश्य 'बकवास की शिनाख्त' होना चाहिए। मेरा मत है कि गणित सीखने से हमें बकवास की शिनाख्त में बहुत मदद मिल सकती है और यह हमें एक सच्चे प्रजातांत्रिक समाज की ओर ले जा सकता है। शायद कह सकते हैं कि यही गणित की सामाजिक भूमिका है।

वह 'बकवास' क्या है, जिसकी शिनाख्त की जानी है? अधिकार-सम्पन्न लोग अपने सबसे प्रिय विश्वासों का प्रचार-प्रसार करने के लिए अक्सर धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक और पहचान-आधारित तर्कों का इस्तेमाल करते हैं। वे अपनी ताकत और अन्य लोगों पर नियंत्रण को बरकरार रखने के लिए गलतफहमियों, गलत मान्यताओं, अन्धविश्वासों और यहाँ तक कि झूठ को सच बताने तक का सहारा लेते हैं। पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें इन 'सत्यों' को पूरे समाज में फैलाने के आसान तरीके हैं। हमारी शिक्षा का इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा है। आजकल सोशल मीडिया संचार का एक शक्तिशाली हथियार बन गया है। बढ़ते क्रम में, हमसे अपेक्षा की जा रही है कि हम भावनाओं और आस्थाओं का सहारा लें, भले ही तथ्य इन आस्थाओं को झुठला रहे हों। जिस 'बकवास' की बात मैं कर रहा हूँ, वह यही है, जिसे शिक्षा और खासकर गणित शिक्षा के माध्यम से उजागर किया जाना चाहिए। क्यों इसे चुपचाप झेलें?

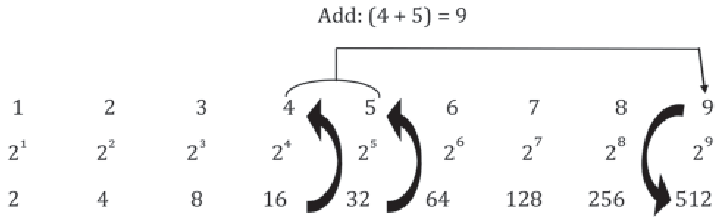

चित्र-1

हमारे ज़माने के आवेशित माहौल में आलोचनात्मक खोजबीन और असहमति के स्वरों को राजद्रोह की संज्ञा दी जाती है। यदि मैं सार्वजनिक रूप से वैदिक गणित पर या हमारी पहचान, अतीत और संस्कृति को लेकर किए जा रहे अन्य सन्दिग्ध दावों पर सवाल उठाऊँ तो शायद मुझे कड़ी निन्दा से नवाज़ा जाएगा। ये सारे दावे हमारी विरासत की महानता स्थापित करने के लिए तैनात किए जाते हैं। तो मेरा तर्क है कि आलोचनात्मक खोजबीन की संस्कृति, गणित सीखना जिसका अभिन्न अंग है, बच्चों को 'बकवास' को पहचानने में मददगार हो सकती है।

कुछ गणित शिक्षण के अनुभव

शिक्षक के रूप में अपने अनुभव पर लौटता हूँ। वैली स्कूल में मेरे छात्रों और मैंने कई 'आहा!' क्षणों का लुत्फ लिया। मुझे याद है कि जब मैंने कक्षा-9 के छात्रों को एक छोटी-सी तालिका (चित्र-1) की मदद से बताया था कि लॉगरिद्म का जुगाड़ काम कैसे करता है, कैसे वह गुणा और भाग की जटिल संक्रियाओं को जोड़ और बाकी की सरल संक्रियाओं में तबदील कर देता है, तो वे अवाक रह गए थे। यह विचार लॉगरिद्म के मूल में है, जो हम छात्रों को कभी नहीं बताते।

पहली पंक्ति की संख्याएँ एक 'अंकगणितीय श्रृंखला' की सदस्य हैं (जिसमें हम प्राकृतिक संख्याओं की सूची भर बनाते हैं) और सबसे निचली पंक्ति की संख्याएँ जिस श्रृंखला का अंग हैं उसे 'ज्यामितीय श्रृंखला' कहते हैं (जिसमें हर संख्या पिछली संख्या को दुगना करके मिलती है)। जैसा कि आप देख ही सकते हैं, बीच की पंक्ति की संख्याएँ, निचली पंक्ति की संख्याओं को 2 के आधार पर परिवर्तित करके बनी हैं। जैसे 16 को लिखा गया है 2^4 और 32 को 2^5 लिखा गया है। यहाँ 2 को आधार कहते हैं जबकि 4 और 5 घातांक कहलाते हैं। हम अन्य आधारों का भी उपयोग कर सकते हैं किन्तु बात को आगे बढ़ाने के लिए यही उदाहरण लेकर चलते हैं।

मान लीजिए हमें 16 में 32 का गुणा (16 x 32) करना है। आप 16 और 32 से सम्बन्धित संख्याओं (यानी क्रमश: 4 और 5) को पहली पंक्ति में देखेंगे। इन्हें जोड़ दीजिए: 4 + 5 = 9. निचली पंक्ति में 9 से सम्बन्धित संख्या क्या है? यह है 512. तो यह रहा आपका उत्तर! अद्‌भुत है, नहीं? जब कक्षा 9 के छात्र इसे समझ गए तो वे लगभग अविश्वास से बोल उठे, "ऐसा है?" मैंने जवाब दिया, "बिलकुल, लॉगरिद्‌म की अवधारणा इसी तरह काम करती है।" यहाँ गुणा को वास्तव में एक जोड़ की तरह किया जाता है, जिसके चलते वह सिर्फ सरल ही नहीं त्वरित भी हो जाता है। ऐसा ही तर्क भाग के मामले में भी काम करता है, जिसे घटाने के रूप में किया जाता है। क्या आप 256/8 को उपरोक्त तालिका की मदद से हल कर सकते हैं?

यह लॉगरिद्‌म की कक्षा तो है नहीं, इसलिए मैं इसके बारे में और चर्चा नहीं करूँगा; मुझे यकीन है कि इसे लेकर आपके कई सवाल हैं। उदाहरण के लिए 20 x 17 कैसे करेंगे? या उससे भी रोचक सवाल होगा कि 3.2 x 5.4 कैसे किया जाएगा? वगैरह। जब चीज़ें जटिल होने लगती हैं, तब क्या होता है? आप तमाम किस्म के भाग के सवालों के बारे में भी पूछ सकते हैं। और 2 की बजाय आप अन्य संख्याओं को आधार बना सकते हैं। मैंने जो तर्क पेश किया है, वह नहीं बदलता। अलबत्ता, कुछ और बातें कहना मुनासिब है।

उन लॉगरिद्‌म तालिकाओं को याद कीजिए जिनका इस्तेमाल हमने सवाल हल करने में किया था, जिनमें तमाम संख्याएँ बारीक अक्षरों में लिखी होती हैं। वे सब चित्र-1 में दर्शाए गए तर्क के आधार पर बनाई गई हैं। पहली पंक्ति में लॉगरिद्‌म होते हैं, अर्थात् वह घातांक जो आधार 'a' पर लगाने से निर्धारित संख्या मिलेगी। 16 x 32 के हमारे उदाहरण में 16 को लीजिए। 16 प्राप्त करने के लिए आधार 2 पर क्या घातांक लगाना होगा? जवाब है 4 क्योंकि 2^4 = 16 होता है। इसी प्रकार से 32 के लिए

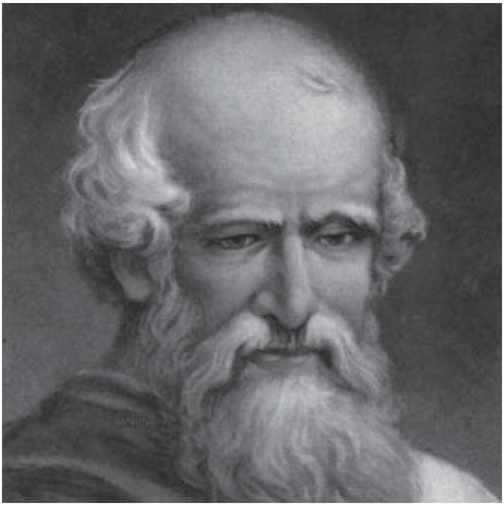

महान यूनानी गणितज्ञ आर्किमिडीज़

घातांक 5 है क्योंकि $2^5 = 32$. इसे हम आम तौर पर इस तरह लिखते हैं: $\log_2 16 = 4$ और $\log_2 32 = 5$.

यहाँ 4 और 5 (घातांक) को लॉगरिद्म कहते हैं। यानी जब हम किसी संख्या के आगे 'log' लिखते हैं, तो इसका मतलब होता है: घातांक पता करें। तब हम एक आसान-सा नियम लागू करते हैं:

$$a^m \times a^n = a^{m+n}$$

वर्तमान उदाहरण में $2^4 \times 2^5 = 2^{4+5} = 2^9$

तो लॉगरिद्म हमें लॉग्स को जोड़ने में मदद करते हैं: $\log_2 16 + \log_2 32 = 4 + 5 = 9$ और इस तरह से गुणा को एक आसान जोड़ के सवाल में बदल देते हैं। किन्तु यह तो ज़ाहिर है कि जवाब 9 नहीं है। इसलिए हमें एक बार फिर अपनी तालिका को देखना पड़ेगा कि निचली पंक्ति (जिन्हें एंटी-लॉगरिद्म कहते हैं) में कौन-सी संख्या लॉगरिद्म पंक्ति के 9 से मेल खाती है। आप तालिका में देख ही सकते हैं कि जवाब है 512.

लॉगरिद्म का बुनियादी सिद्धान्त (और लॉगरिद्म तालिका) महान यूनानी गणितज्ञ आर्किमिडीज़ को ईसा पूर्व तीसरी सदी में ज्ञात था। लेकिन इसकी बारीकियों का विवरण करने का काम पूरी एक सहस्त्राब्दि उपरान्त सत्रहवीं सदी में स्कॉटिश गणितज्ञ जॉन नेपियर ने किया। दुनिया भर में व्यापार और नौवहन में विस्तार के साथ कठिन संख्याओं की गणनाएँ करने की ज़रूरतें भी बढ़ गई थीं और ये विवरण व्यावहारिक रूप से ज़रूरी हो गए थे। लॉगरिद्म ने राहत प्रदान की। फर्मा के समान नेपियर भी गणित में शौकिया तौर पर जुड़े थे।

ज्ञान का निर्माण काफी श्रमसाध्य काम है। इसलिए बच्चों को ज्ञान की समझ बनाने में मदद के कदम काफी सोच-समझकर तय किए जाने चाहिए। जब उन्हें इस श्रमसाध्य काम में अर्थ नज़र आने लगता है, तो उन्हें कोई नहीं रोक सकता।

मैंने अपने छात्रों को लॉगरिद्म की कहानी दो सत्रों में सुनाई थी। कल्पना कीजिए कि यदि इसकी बजाय मैं शुरुआत यहाँ से करता: "यदि $a^x = y$ है, तो x को a के आधार पर y लॉगरिद्म कहते हैं।" आप झुंझलाकर बाल नहीं नोंच लेते? यही कारण है कि बच्चे गणित से कन्नी काटते हैं।

***

मुझे याद नहीं पड़ता कि चन्ना ने अपरिमेय π के बारे में इससे ज़्यादा चर्चा की थी कि वह एक अन्तहीन दशमलव संख्या है। लेकिन एक शिक्षक के रूप में मैंने इस पगली संख्या का खुलासा करने में काफी समय व्यतीत किया था। प्रसंगवश बता दूँ कि इस संख्या के नाम पर एक दिवस है - π दिवस हर वर्ष मार्च 14 को मनाया जाता है (क्या आप

अन्दाज़ लगा सकते हैं कि मार्च 14 ही क्यों?)। हमने π को समझने के लिए एक गतिविधि की थी जो मैं आपके साथ साझा करना चाहूँगा। छात्रों को इसमें बहुत मज़ा आया था।

स्कूल विज्ञान दिवस पर हमने एक π दुम बनाई थी। मेरे पास π का कंप्यूटर-जनित मान 2500 दशमलव स्थानों तक था। यह मैंने पुस्तकालय की एक किताब से फोटोकॉपी किया था। विचार यह था कि इन सब दशमलव अंकों को एक दुम के रूप में लिखें और पूरे स्कूल को इस दुम से घेर दें। इसके लिए हमने अखबारों से 4 इंच चौड़ी पट्टियाँ बनाकर जोड़ लीं और उस (लम्बी-सी पट्टी) पर मार्कर पेन से सारे दशमलव अंक लिख दिए। छात्रों के पास जब भी फुरसत होती, वे गणित कक्ष में आकर पट्टी पर दशमलव अंक लिखते। इस काम को करने के लिए कई बार तो उन्होंने तड़ी भी मारी।

विज्ञान दिवस के दिन हमने यह लम्बी पट्टी (लगभग 850 फीट की) निकाली और पुस्तकालय के सामने लगे सूचना पटल से शुरू करके शब्दश: पूरे स्कूल को इस मनमौजी संख्या की अपरिमेय जकड़ में लपेट दिया।

हर किसी को कौतूहल था, खासकर छोटे बच्चों को। वे इस बेतुकी दुम के इर्द-गिर्द भाग रहे थे। स्कूल भवन के आसपास लहराते, कक्षाओं के अन्दर-बाहर, खिड़कियों में से बाहर निकलते, यहाँ तक कि शौचालयों में भी प्रवेश करते और अन्तत: ऊपर जाकर जंगल-जिम के पेड़ पर लिपटे हुए अन्तहीन अंकों से हैरान होकर वे इधर-से-उधर भाग रहे थे। जब मेरे कुछ छात्रों ने आकर कहा कि "अब हमें समझ आ गया है कि π को अपरिमेय संख्या क्यों कहते हैं... यह तो लगता है चलती ही जा रही है!" मैं समझ गया कि π दुम का असर हुआ है। 'अनुभव-आधारित सीखने' के बारे में यही कह सकते हैं। वैसे मैं पक्का नहीं कह सकता कि उन्होंने फिर कभी π के बारे में सोचा।

π से पंगा लेने का एक और मौका मुझे अँग्रेज़ी की कक्षा में हाथ लगा था। π के जितने चाहें दशमलव स्थान याद रखने के लिए आप स्मृति-युक्तियों (mnemonics) का इस्तेमाल कर सकते हैं। लेकिन यदि आप इस रहस्यमयी संख्या को फतह करना चाहते हैं तो इससे कोई बहुत बड़ी राहत नहीं मिलेगी।

एक बार मुझे एक गणित शिक्षक के तौर पर अँग्रेज़ी सृजनात्मक लेखन की कक्षा में बुलाया गया था। मैंने इस निमंत्रण को स्कूल में विषयों के बीच सेतु बाँधने के एक अवसर के रूप में लिया। मैंने π के प्रथम 100 दशमलव अंक लिखे और बच्चों से कहा कि एक पैराग्राफ लिखें जिसमें हर शब्द में उतने ही अक्षर हों जितना कि उस स्थान के अंक का मान है। उदाहरण

के लिए 500 के प्रथम सात अंकों (3.1415926) को इस तरह लिखा जा सकता है: “May (3) I (1) have (4) a (1) large (5) container (9) of (2) coffee (6)?” इस नियम का पालन करते हुए छात्रों ने कुछ ऐसी मज़ेदार चीज़ें लिखीं कि अगले कई दिनों तक हम लोट-पोट होते रहे। बदकिस्मती से मैंने उनके लेखन के नमूने इकट्ठे नहीं किए थे।

आप देख ही सकते हैं, जब मैं शिक्षक बना तो चन्ना की विरासत मेरे अन्दर काफी सशक्त रूप से जीवित रही। एक अच्छा गणित शिक्षक आप में ऐसे परिवर्तन ला सकता है।

गणित इतिहास के आइने में

1994 में वैली स्कूल में एक महत्वपूर्ण घटना हुई जिसने गणित के विकास के इतिहास की मेरी समझ में आमूल परिवर्तन कर दिया। मैंने कुछ नया सीखा और चन्ना ने हमें जहाँ छोड़ा था, वहाँ से आगे बढ़ गया। मेरे एक वरिष्ठ सहकर्मी थे जिनकी रुचि भी यह समझने में थी कि विभिन्न संस्कृतियों में सहस्त्राब्दियों में गणित का विकास कैसे हुआ। उन्हें पता चला कि मैनचेस्टर विश्वविद्यालय के गणित के एक विद्वान जॉर्ज गेवर्गीस जोसेफ शहर में आए हुए हैं। जोसेफ ने गणित की ‘गैर-यूरोपीय जड़ों’ पर व्यापक अनुसन्धान किया था।

उन्हें अपने स्कूल में एक व्याख्यान

जॉर्ज गेवर्गीस जोसेफ

देने को आमंत्रित करने के मकसद से हम जाकर उनसे मिले। हमारी खुशी का ठिकाना नहीं रहा जब उन्होंने फौरन हामी भर दी। जोसेफ का व्याख्यान आकर्षक था और परास बहुत व्यापक था। उन्होंने हमें बताया कि गणित और विज्ञान का पूरा कारोबार कैसे ‘युरो-केन्द्रित’ रहा है। दरअसल, आज तक हमें स्कूलों में बताया जाता है कि प्राचीन समय से ही यूरोप गणित और विज्ञान का वैश्विक केन्द्र था। ऐसा संकीर्ण नज़रिया इस तथ्य को अनदेखा कर देता है कि अन्य प्राचीन संस्कृतियों ने भी गणित व विज्ञान के विकास में काफी योगदान दिया है और कई मामलों में तो यह यूरोप में हुई खोजों से सैकड़ों वर्ष आगे था। खास तौर से अन्धकार युग में तो यूरोप महाद्वीप गहरी तन्द्रा में था।

जोसेफ ने इस नई समझ के सन्दर्भ में अपने प्रिय शोध प्रोजेक्ट के बारे में बताया - केरल गणित घराने की खोज। केरल गणित घराना अर्थात् केरल स्कूल ऑफ मैथेमेटिक्स चौदहवीं से सोलहवीं सदी के बीच संगमग्राम के माधव और तिरुर के नीलकण्ठ जैसे गणितज्ञों के काम के फलस्वरूप फला फूला था।

गणित के वैकल्पिक इतिहास पर अनुसंधान ने स्पष्ट रूप से दर्शा दिया है कि केरल घराना गणित के उस महान औज़ार - 'केल्कुलस' - की खोज से कम-से-कम 2 शताब्दी पूर्व अस्तित्व में था। आम तौर पर न्यूटन और लीबनिट्ज़ को केल्कुलस के संस्थापक माना जाता है और उन्हें इस बात का श्रेय दिया जाना चाहिए कि उन्होंने विभिन्न अलग-अलग विचारों को केल्कुलस के सुसंगत धागे में पिरोया था, लेकिन साथ ही भारतीय, चीनी और अरब गणितज्ञों की खोजों को अनदेखा नहीं किया जा सकता।

जैसा कि जोसेफ ने बताया, हम इस बात को नज़रअन्दाज़ नहीं कर सकते कि मिस्र, बेबीलोन, चीन और भारत से गणितीय विचार अरब दुनिया के माध्यम से यूरोप तक पहुँचे थे। इस क्षेत्र में किए गए अनुसन्धानों ने इस बाबत अकाट्य प्रमाण प्रस्तुत किए हैं कि इस गणितीय संचार ने पायथागोरस के समय से ही यूरोपीय गणित के विकास को प्रभावित किया था। पायथागोरस को पता था कि मिस्र के गणितज्ञ उसका प्रमेय जानते थे और यह भी पता था कि उन्होंने इसको सिद्ध नहीं किया है। शायद उन्हें इसकी ज़रूरत भी नहीं थी क्योंकि उनका पूरा ज़ोर तो गणित के व्यावहारिक उपयोगों पर था।

जोसेफ से यह अचानक मुलाकात 1990 के मध्य दशक में हुई थी जब मैं एक शिक्षक था। इसकी बदौलत मैं उस कौतूहल को और टटोल सका जिसके बीज चन्ना ने 1980 के दशक में बोए थे। मैंने इन रोमांचक खोजों की बात अपने छात्रों से भी की। मैंने जोसेफ की पुस्तक *क्रेस्ट ऑफ दी पीकॉक* भी खरीद ली जिसमें उन्होंने यूरोप के बाहर किए गए गणित और खोजों की विस्तृत चर्चा की है। पुस्तक की शुरुआत मध्य भूमध्यरैखीय अफ्रीका से मिली 'इशांगो अस्थि' (Ishango bone) के गणित से होती है। इशांगो अस्थि का सम्बन्ध चन्द्र

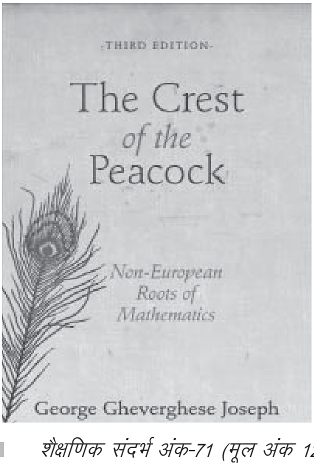

कैलेंडर से है। इससे साबित होता है कि गणित कम-से-कम 20,000 वर्ष पूर्व अस्तित्व में था। यह पुस्तक अत्यन्त पठनीय है और यकीनन आपकी आँखें खोल देगी।

मैं नहीं जानता कि दुनिया में गणित के विकास के इन वैकल्पिक दृष्टिकोणों को लेकर चन्ना का मत क्या है। वैसे भी हमने स्कूल में इसकी चर्चा नहीं की थी। आम तौर पर इतिहास पेचीदा, रोचक और फिसलनभरा होता है। गणित का इतिहास उससे अलग नहीं है।

जिन शख्सों ने मुझे ग्यारहवीं और बारहवीं में तथा इंजीनियरंग के चार वर्षों में पढ़ाया था, वे निसन्देह समर्पित शिक्षक थे। लेकिन वे सिर्फ परीक्षा को ध्यान में रखकर पढ़ाने के प्रति समर्पित थे। कोई कहानी नहीं, कोई परिप्रेक्ष्य नहीं, कल्पना की कोई उड़ान नहीं। महज़ सिलेबस पूरा करने के लिए गणित का शिक्षण। ऊपर से उन्होंने यह चेतावनी भी दे दी थी, "यदि तुम्हें फलाँ-फलाँ प्रतिशत अंक नहीं मिले तो तुम इंजीनियरिंग या मेडिसिन में प्रवेश नहीं कर पाओगे।"

गोया यही दो ठीक-ठाक करने योग्य काम थे।

ज्ञान अर्जित करने का आनन्द अनुभव करना एक बात है। लेकिन यह सवाल भी है कि आप उस ज्ञान का करते क्या हैं। कुछ समय तक मैंने खगोल शास्त्री या सैद्धान्तिक भौतिक शास्त्री बनने के सपने देखे क्योंकि मुझे लगता था कि भौतिकी एक 'गहरा' विज्ञान है। प्राकृतिक विश्व के बारे में ज्ञान के सृजन और खोज के प्रति जीवन समर्पित करना काफी लुभावना विचार था, लेकिन सामाजिक पहलू बार-बार लौटकर मेरे सामने आ जाता था। मैंने निर्णय किया कि वह ज्ञान सबके लिए सुलभ करना कहीं ज़्यादा उपयोगी काम होगा। ज्ञान का उद्‌घाटन कहीं अधिक महत्वपूर्ण कार्य है जिस पर तत्काल ध्यान देने की ज़रूरत है।

रोमांचक यात्रा वैली स्कूल के आगे भी जारी रही। रहना ही थी क्योंकि कारण कहीं अधिक गहरे थे।

...जारी

शेषागिरी केएम राव: यूनीसेफ, छत्तीसगढ़ में शिक्षा विशेषज्ञ हैं। प्रारम्भिक शिक्षा और बाल्यावस्था में विकास में विशेष रुचि। साथ ही, आधुनिक शैक्षिक मुद्‌दों पर लिखने में दिलचस्पी।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: सुशील जोशी: *एकलव्य* द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

यह लेख *एकलव्य* द्वारा प्रकाशित पुस्तक *द मैन हू टॉट इंफिनिटी* से लिया गया एक अंश है। यह किताब *एकलव्य,* पिटारा में उपलब्ध है।

भाग - 2

प्रकाश की गति मापना - कुछ कोशिश धरती पर

अंजु दास मानिकपुरी

इस लेख की पहली किश्त में हमने देखा कि 17वीं सदी में प्रकाश की 'अनन्त गति' को नापने के कुछ प्रयास किए गए, जिनमें गैलीलियो एवं रोमर के नाम प्रमुख हैं। गैलीलियो ने प्रकाश की गति को नापने की कोशिश धरती पर ही की थी। लेकिन रोमर ने बृहस्पति के उपग्रह ईवो को लगने वाले ग्रहण के समय को आधार बनाकर प्रकाश की गति के लिए एक ठोस आँकड़ा निकालने का प्रयास किया। इसके बाद काफी साल प्रकाश की गति को लेकर कोई उल्लेखनीय पहल नहीं हुई। शायद लोग रोमर के प्रयास को भूलने भी लगे थे, लेकिन 18वीं सदी में समय ने एक बार फिर करवट बदली। इस बार एक नई समस्या पर काम चल रहा था। तारे पृथ्वी से काफी दूरी पर हैं, यह तो सभी जानते थे लेकिन यह दूरी वास्तव में कितनी है, इसे कैसे पता किया जाए?

पृथ्वी साल भर में सूरज की एक परिक्रमा पूरी करती है। इस एक परिक्रमा के दौरान विविध तारों का अवलोकन करने से समझ आया कि (अन्य तारों की स्थिति की तुलना में) कुछ तारों की आकाशीय स्थिति में काफी बदलाव होता है व कुछ तारों में नाममात्र का बदलाव भी नहीं होता। इसे लेकर एक विचार यह भी था कि पास के तारों की स्थिति में बदलाव ज़्यादा होगा और दूरस्थ तारों में बदलाव नाममात्र। कुछ खगोलविद इसी सन्दर्भ में पैरेलेक्स विधि पर काम कर रहे थे, जिसके तहत किसी अवलोकनकर्ता द्वारा (किसी बहुत दूर स्थित तारे की स्थिति की तुलना में) किसी तारे की आज की आकाशीय स्थिति और छह महीने बाद की आकाशीय स्थिति की तुलना कर कुछ गणनाएँ करके तारे की दूरी मालूम करने की कोशिश की जा सकती थी। तारों की दूरी और निकटता को लेकर कुछ कयास थे, लेकिन पास मतलब कितना पास और दूर मतलब कितना दूर, यह नहीं मालूम था। और इसी दौरान और इस सबकी वजह से प्रकाश की गति को लेकर भी कुछ विचार उभरने लगे।

सन् 1728 में इंग्लैंड के खगोलशास्त्री जेम्स ब्रेडली तारों के

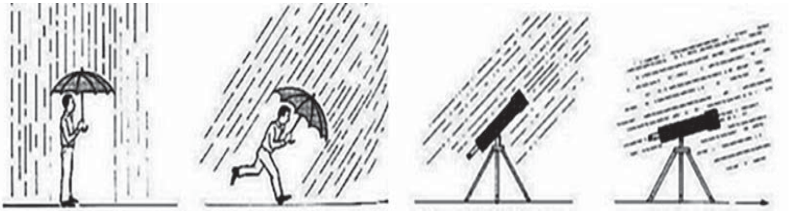

स्थिर *गति करते हुए* *स्थिर* *गति करते हुए*

चित्र-1: *ड्रेको तारा समूह के एक तारे में असामान्य विस्थापन देखने के बाद ब्रेडली ने रोज़मर्रा के अनुभव से बारिश से बचने के लिए छाता लेकर ठहरे हुए इन्सान और छाता लेकर दौड़ते हुए इन्सान के छातों के कोण के आधार पर यह समझने की कोशिश की थी कि तारों से धरती पर आने वाला प्रकाश भी बारिश की बूँदों के समान होता है। पृथ्वी से छह महीनों के अन्तराल पर देखने पर तारों की स्थिति में विस्थापन भी इसीलिए देखने को मिलता है। इसी विस्थापन का उपयोग ब्रेडली ने प्रकाश की गति पता करने के लिए किया।*

पैरेलेक्स का अध्ययन कर रहे थे। इस अध्ययन के दौरान उन्हें समझ आया कि कुछ तारों की आकाशीय स्थिति में बदलाव 20 सेकण्ड (सेकण्ड - कोण नापने की एक इकाई) तक मिल रहा था। उदाहरण के लिए, उन्होंने पाया कि ड्रेको नक्षत्र (तारा समूह) में एक तारे की स्थिति साल भर बदलती रहती है। हैरान करने वाली बात यह थी कि तारे में विचलन की दिशा पृथ्वी की गति की दिशा के विपरीत होनी चाहिए थी, परन्तु जब उन्होंने टेलिस्कोप से तारे के कई अवलोकन किए तो पाया कि तारे के विस्थापन की दिशा और पृथ्वी के घूमने की दिशा एक ही है। ब्रेडली समझ गए कि यह पैरेलेक्स की वजह से सम्भव नहीं है। इस विचलन को aberration of starlight कहा गया। ब्रेडली इस सवाल से लम्बे समय तक जूझते रहे लेकिन जल्द ही उन्हें इस बात का भान हो गया कि तारे के इस विस्थापन (aberration) का सम्बन्ध पृथ्वी की परिभ्रमण गति से अवश्य है।

अन्ततः इसे समझने के लिए ब्रेडली ने बारिश से बचने के लिए खुले हुए छाते का उदाहरण देते हुए एक परिकल्पना प्रस्तुत की। मान लीजिए कि आप बारिश में खड़े हैं और बारिश की बूँदे सीधी नीचे की ओर गिर रही हैं। ऐसी स्थिति में आप छाते को अपने सिर के ठीक ऊपर सीधा रखेंगे - ऐसा करने से आप बारिश से बचे रहेंगे। अब अगर आप इस बारिश में चलने लगें तो आपके छाते के आगे गिरने वाली बूँद आप से टकराएगी क्योंकि जब तक वह बूँद नीचे को आएगी, आप आगे को कदम बढ़ाकर उसके रास्ते में आ जाएँगे। इसलिए अगर आप बारिश में चलते हैं तो अपने आप को बारिश से बचाने

के लिए छाते को थोड़ा-सा आगे को झुकाना पड़ेगा ताकि आगे गिरने वाली बूँदें आपके चलने के बावजूद आपको भिगोएँ नहीं। सही ही है, क्योंकि आप आगे गिरने वाली बूँदों की तरफ जा रहे हैं, और आपके पीछे गिरने वाली बूँदों से दूर।

अब आप सोचकर देखिए, अगर आप तेज़ी-से चल रहे हैं तो आपको छाता ज़्यादा आगे को झुकाना पड़ेगा। अगर बूँदें धीमी गिर रही हैं तो भी आपको छाता आगे को ज़्यादा झुकाना पड़ेगा। यानी कि अगर आप अपनी गति जानते हैं, और बारिश की बूँदों के गिरने की गति जानते हैं तो आप पता कर सकते हैं कि आपको छाता कितने कोण पर तिरछा रखना होगा। और इसी तर्क से, अगर आप अपनी चाल जानते हैं और आपको यह पता है कि कितने कोण पर छाता तिरछा रखकर आप बारिश से बच पा रहे हैं, तो इन दोनों का इस्तेमाल करते हुए आप बारिश की बूँदों के गिरने की गति पता कर सकते हैं।

ब्रेडली ने इसी तर्क को आगे बढ़ाते हुए माना कि तारों से आने वाला प्रकाश भी बारिश की बूँदों की तरह पृथ्वी पर गिरता होगा। जिस तरह हम बारिश की बूँदों से बचने (यानी वे छाते पर गिरें, यह सुनिश्चित करने) के लिए छाते को एक खास कोण पर रखते हैं, उसी तरह से घूमती धरती पर किसी तारे के प्रकाश को पकड़ने के लिए टेलिस्कोप को खास कोण पर रखना पड़ता है। इसी वजह से उन्हें तारों की स्थिति में अन-अपेक्षित विचलन मिल रहा था। उन्हें वह विचलन कोण तो मालूम था ही, साथ ही यह जानकारी भी थी कि पृथ्वी सूर्य के इर्द-गिर्द किस गति से घूमती है – तो इन दोनों आँकड़ों का इस्तेमाल करते हुए, ब्रेडली गणना कर पाए कि तारे से धरती पर प्रकाश किस गति से गिरता है। ब्रेडली ने प्रकाश की गति लगभग 1,76,000 मील या 2,84,000 कि.मी. प्रति सेकण्ड बताई, जो प्रकाश के वर्तमान परिशुद्ध मान से कुछ हज़ार कि.मी. कम है, परन्तु रोमर के आँकड़ों पर आधारित गणनाओं से कहीं बेहतर।

धरती पर गति नापने की कोशिश

रोमर और ब्रेडली, दोनों ने ही खगोलीय घटनाओं को आधार बनाकर प्रकाश की गति को नापा, जिसमें मापन की शुद्धता एवं सूक्ष्मता के कई कारक हमारे बस में नहीं होते। इसलिए कई वैज्ञानिक इस बारे में सोचने लगे थे कि क्या प्रकाश की गति को धरती पर नापा जा सकता है, क्या धरती पर मिली माप और खगोलीय विधियों से मिली माप लगभग एक जैसी होंगी या उनमें काफी अन्तर होगा।

19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में प्रकाश के कई गुणधर्मों को समझा जा रहा था, कई प्रकाशीय उपकरण जैसे कैमरा,

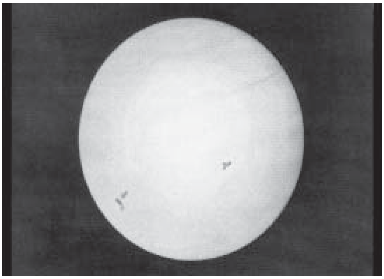

चित्र-2: लुईस डेगुरर ने फोटोग्राफिक प्लेट की मदद से फोटोग्राफी को सम्भव बनाया था। लेकिन फोटोग्राफिक प्लेट पर चित्र उभरने में काफी समय लगता था। फीज़ो ने इस समय को कम करने की कोशिश की और सूरज का फोटो भी खींचा। इस फोटो खींच पाने की त्वरित तकनीक से खग्रास सूर्यग्रहण के दौरान सूरज की विविध स्थितियों के फोटो खींच पाना और अध्ययन कर पाना सम्भव हुआ।

स्पेक्ट्रोस्कोप आदि का उपयोग शुरू हो चुका था। लगभग इसी दौर में फ्रांस के अर्मांड हिप्पोलिट फीज़ो (Armand Hippolyte Fizeau 1819-96), कैमरा व फोटोग्राफी के अध्ययन में व्यस्त थे। असल में, फीज़ो प्रोफेसर लुईस डेगुरर की एक डेमो क्लास में उपस्थित थे, जहाँ उन्होंने देखा कि प्रोफेसर डेगुरर आयोडीन-युक्त कुछ रसायन की मदद से 30 मिनट में फोटो निकालकर लोगों को दिखाते थे। इस डेमो क्लास के बाद से ही फीज़ो सोचने लगे कि फोटोग्राफी की इस प्रक्रिया को सरल कैसे बनाया जाए, जिससे कम-से-कम समय में ज़्यादा फोटो निकाली जा सकें। उन दिनों फोटो खिंचवाने के लिए लोगों को एक ही पोज़िशन में काफी देर मूर्ति जैसे स्थिर बने रहना होता था। फीज़ो अपनी इस कोशिश में सफल भी हुए और ब्रोमीनयुक्त एक रसायन का इस्तेमाल करके 20 सेकण्ड में फोटो निकालकर दिखाई जो प्रोफेसर डेगुरर द्वारा लगाए गए समय के मुकाबले काफी कम था।

इस कोशिश और रुचि को आगे बढ़ाते हुए फीज़ो अपने दोस्त फूको के साथ खगोलीय पिण्डों की भी फोटो खींचना चाहते थे। इसी सन्दर्भ में वे एक अन्य खगोलशास्त्री एरगो (Francois Jean Arago) के सान्निध्य में आए और उनकी देखरेख में टेलिस्कोप में दिख रहे सूरज की फोटो खींची। यह फोटो उस समय की पहली खगोलीय या आकाशीय फोटोग्राफी थी। कैमरे का इस्तेमाल करते समय फ्लैश लाइट की चमक को देखकर फीज़ो के मन में सवाल कौंधा कि पृथ्वी पर प्रकाश की गति कितनी होगी।

एरगो के सान्निध्य में रहते हुए फीज़ो ने प्रकाश की प्रकृति को लेकर कण सिद्धान्त और तरंग सिद्धान्त की जद्दोजहद में लगे एरगो की कई रिपोर्ट्स को काफी बारीकी-से पढ़ा। उस समय प्रकाश की प्रकृति को लेकर अलग-अलग तर्क दिए जाते थे। कुछ तर्क इस तरह थे, जैसे यदि प्रकाश का कण सिद्धान्त सही है तो प्रकाश की गति सघन माध्यम में कुछ ज़्यादा होनी चाहिए, जैसे पानी में। इसी तरह प्रकाश यदि तरंग प्रकृति का है तो इससे

उल्टा होना चाहिए अर्थात् सघन माध्यम में प्रकाश की चाल कम होनी चाहिए। उन्होंने अपने अवलोकन के आधार पर लिखा कि प्रकाश विरल माध्यम के बनिस्बत सघन माध्यम में तुलनात्मक रूप से धीमा हो जाता है।

सन् 1842 में क्रिश्चियन डॉप्लर ने नया विचार सामने रखा। जिसे बाद में डॉप्लर प्रभाव कहा गया। फीज़ो का मानना था कि डॉप्लर प्रभाव को प्रकाश पर भी लागू करना चाहिए क्योंकि वह भी एक तरंग की भाँति व्यवहार करता है। पर इसके लिए यह जानना ज़रूरी था कि प्रकाश की गति क्या है। यानी कि प्रकाश के कई गुणों का अध्ययन इसलिए नहीं हो पा रहा था क्योंकि प्रकाश की वास्तविक गति पता नहीं थी। बस, इन्हीं सब विचारों ने फीज़ो का ध्यान प्रकाश की गति की ओर खींचा। आइए, फीज़ो के

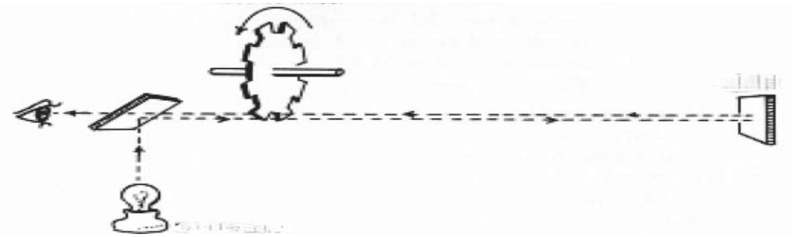

चित्र-3: इस जमावट में प्रकाश का स्रोत, दो दर्पण, दाँतेदार पहिया, प्रतिबिम्ब देखने की जगह आदि स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे हैं। इस उपकरण में दाँतेदार पहिए की विशेष भूमिका है। फीज़ो विधि में प्रकाश की गति की गणना कैसे करते थे, इसे समझने के लिए एक उदाहरण लेते हैं - मान लीजिए दाँतेदार पहिए पर 720 दाँत बने हैं। हरेक दाँत की मोटाई उतनी ही रखी गई जितनी दो दाँतों के बीच की खाली जगह (खाँचा)। यानी पहिए पर 720 दाँत और 720 खाँचे थे। दो दर्पणों के बीच प्रकाश किरण की आवाजाही इस दाँतेदार पहिए के दाँतों के बीच के खाँचों से ही सम्भव थी। इस पहिए की गति कम-ज़्यादा की जा सकती थी। यदि प्रकाश किरण दर्पण-एक से दर्पण-दो तक जाए और वहाँ से वापस पुनः दर्पण-एक तक आए तो यह तभी सम्भव था जब प्रकाश किरण को इस दूरी को तय करने में लगने वाले समय में दाँतेदार पहिए की एक खाली जगह और एक दाँत आगे खिसक जाए, और एक नया खाँचा वहाँ आ जाए।

बतौर उदाहरण पहिए को एक सेकण्ड में 12 बार घुमाया गया। तो इसका अर्थ है एक सेकण्ड में पहिए के 720 x 2 x 12 = 17280 दाँत और खाँचे प्रकाश किरण के मार्ग से गुज़रे। इसके मायने ये भी हुए कि खाँचा गुज़रकर दूसरा खाँचा आने में 1/17280 सेकण्ड का समय लगा। इतने समय में प्रकाश की किरण दर्पण-एक से दर्पण-दो तक जाकर वापस दर्पण-एक तक आ जाती है। एक खाली स्थान से अगले खाली स्थान के आने तक लगे समय को यदि प्रकाश किरण द्वारा तय की गई दूरी से गुणा करे दें तो प्रकाश की गति मालूम हो जाएगी। मान लीजिए, दोनों दर्पण के बीच का फासला लगभग 5.4 मील है, यानी प्रकाश किरण ने आना-जाना मिलाकर 10.8 मील का फासला तय किया। किलोमीटर में कहें तो लगभग 17 कि.मी. प्रति सेकण्ड।

अब प्रकाश की गति की गणना इस प्रकार कर सकते हैं। 10.8 x 17280 = 1,86,624 मील या 3,00,000 कि.मी. प्रति सेकण्ड।

इस प्रयोग को विस्तार से समझते हैं।

फीज़ो का तरीका

फीज़ो ने भी अपने प्रयोग के लिए गैलीलियो की तरह 1849 में पाँच मील की दूरी पर स्थित दो पहाड़ियों को चुना। गैलीलियो के प्रयोग में समस्या-मूलक प्रतिक्रिया समय को दूर करने के लिए फीज़ो ने दूसरी पहाड़ी पर एक दर्पण रख दिया जिससे टकराकर प्रकाश किरण तुरन्त परावर्तित हो जाती थी। यानी एक पहाड़ी से चमकाए गए प्रकाश की किरण को दूसरी पहाड़ी पर रखे दर्पण से टकराकर लौटने में लगा समय पता चल जाए, तो पहाड़ियों के बीच की दूरी को जानते हुए, प्रकाश की गति की गणना आसानी-से की जा सकती है।

चूँकि फीज़ो के समय प्रकाश की गति का कुछ अन्दाज़ा मिल गया था इसलिए यह स्पष्ट था कि इस प्रयोग में प्रकाश को लगने वाले समय (जो एक सेकण्ड के हज़ारवें हिस्से से भी कम होने वाला था) को उस समय मौजूद सबसे बेहतरीन घड़ी का इस्तेमाल करते हुए भी मापना सम्भव नहीं था। इस काम के लिए फीज़ो ने बहुत ही नायाब युक्ति लगाई। इस काम के लिए फीज़ो ने एक दाँतेदार पहिए का इस्तेमाल किया, जिसे इस तरह रखा गया कि दाँतेदार पहिए की किनार प्रकाश किरण के रास्ते में आए। यानी कि प्रकाश की किरण उस पहिए से आगे जाएगी कि नहीं, यह इस बात पर निर्भर करता कि उसके रास्ते में दाँता है, या दो दाँतों के बीच की खाली जगह यानी खाँचा है।

घूमता हुआ दाँतेदार पहिया इस पूरे उपकरण का महत्वपूर्ण भाग था। जब फीज़ो ने इस पहिए को एक समान गति से धीमे घुमाते हुए तीव्र प्रकाश किरण पहले दर्पण से दूसरे दर्पण की तरफ भेजी, तो प्रकाश किरण इतनी जल्दी वापस आ गई कि अभी भी वही खाँचा सामने मौजूद था। यानी कि दाँतेदार पहिया इतना भी नहीं घूम पाया था कि उसका अगला दाँता लौटती हुई प्रकाश किरण की राह में बाधा बन जाए।

फिर फीज़ो दाँतेदार पहिए को घुमाने की गति बढ़ाते गए, तो ऐसी स्थिति आई जब दूसरे दर्पण से परावर्तित होकर आई प्रकाश किरण की राह में उस खाँचे के बाद का पहला दाँता आ गया जिससे रोशनी की किरण फीज़ो के पास वापस नहीं पहुँच पाई। दाँतेदार पहिए को और ज़्यादा तेज़ी-से घुमाने पर एक स्थिति ऐसी बनी, कि जब दूसरी पहाड़ी से लौटकर प्रकाश किरण आई, तब तक दाँतेदार पहिए का दूसरा खाँचा सरककर सामने आ गया जिसमें से होकर परावर्तित किरण प्रेक्षक के पास वापस लौट आई।

यदि दाँतेदार पहिया स्थिर है तो पहिए के दाँतों के बीच के रिक्त स्थान में से परावर्तित होकर लौटकर

आई किरण की वजह से प्रकाश स्रोत का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। इस प्रयोग के लिए फीज़ो ने अर्धपॉलिश प्लेट एवं उत्तल लेंसों का इस्तेमाल करते हुए सुनिश्चित किया कि प्रकाश किरणों को ज़रूरत के अनुसार फोकस किया जाए एवं लम्बी दूरी तय करने के लिए समानान्तर बना दिया जाए। फीज़ो ने इस दाँतेदार पहिए को जब एक समान गति से घुमाना शुरू किया तो उसने पाया कि जितने समय में प्रकाश पहिए से दूसरे दर्पण तक जाकर पुनः पहिए तक वापस आता है, उतने समय में रिक्त स्थान की जगह दाँतेदार पहिए का निकटवर्ती दाँत सामने आ जाता है। इस स्थिति में प्रकाश स्रोत का प्रतिबिम्ब नहीं दिखता जिसे फीज़ो ने प्रथम ग्रहण कहा। फीज़ो ने पहिए की गति को जब दुगुना किया तो उसने देखा कि प्रकाश स्रोत का प्रतिबिम्ब फिर से दिखने लगा। पहिए की गति को तिगुना करने पर प्रतिबिम्ब दिखना बन्द हो गया, और फीज़ो ने इसे द्वितीय ग्रहण की स्थिति कहा। पहिए की गति को चार गुना करने पर फिर प्रतिबिम्ब दिखने लगा। फीज़ो लगातार पहिए की गति बढ़ाकर घुमाते रहे और देखते रहे कि कब प्रकाश स्रोत का प्रतिबिम्ब दिखता है और कब दिखना बन्द हो जाता है।

इस सबके आधार पर फीज़ो ने प्रकाश की गति की गणना का तरीका निकाल लिया। पहिए की गति मालूम थी, एक खाँचे से दूसरे खाँचे तक पहुँचने में लगने वाला समय भी मालूम था। और प्रकाश किरणों ने कितनी दूरी तय की, यह भी स्पष्ट था। बस इन्हीं आँकड़ों का उपयोग करते हुए फीज़ो ने प्रकाश की चाल ज्ञात की। आइए, समझते हैं कि उन्होंने यह गणना कैसे की।

दूरी के लिए फीज़ो ने दर्पण और दाँतेदार पहिए के बीच की दूरी (d) को दुगुना करके लिया क्योंकि प्रकाश स्रोत से निकलकर पहिए से दर्पण और फिर वापस स्रोत तक लौटता है, अर्थात् दोगुनी दूरी (2d) तय करता है। इस दौरान लगने वाला समय इस बात पर निर्भर करेगा कि दाँतेदार पहिए की कुल परिधि में कितने भाग हैं और एक सेकण्ड में परिभ्रमण के दौरान पहिए के कितने भाग हटेंगे। दाँतेदार पहिए में जितने दाँतों की संख्या होगी उतने ही रिक्त स्थान यानी खाँचे होंगे। यदि दाँतों या रिक्त स्थान की संख्या को हम m से दर्शाएँ तो उस पहिए पर कुल भाग 2m होंगे। ऐसे ही एक सेकण्ड में पहिए के घूमने यानी परिक्रमण की संख्या n हो तो एक सेकण्ड में हटने वाले भागों की संख्या 2mn होगी। इस तरह एक भाग के हटने में लगने वाला समय 1/2mn होगा। फीज़ो ने चाल का सूत्र लगाकर प्रकाश ने जितनी दूरी तय की (2d), उसे लगने वाले समय (1/2mn) से भाग देकर यह बताया कि प्रकाश की चाल 4mnd होगी। यदि

ग्रहण की स्थिति हो तो पहले ग्रहण, तीसरे ग्रहण, अर्थात् विषमगुणज वाले ग्रहण के लिए यह 4mnd/(2r-1) हो जाएगा जहाँ r यह इंगित करता है कि ग्रहण कौन-सा है। प्रथम ग्रहण के लिए r का मान 1 व तीसरे ग्रहण के लिए 3 होगा। वहीं यदि ग्रहण की स्थिति समगुणज जैसे द्वितीय या चतुर्थ ग्रहण की स्थिति हो तो प्रकाश की चाल 4mnd/2r के बराबर होगी।

फीज़ो ने इस प्रयोग को 28 बार दोहराया और इस प्रयोग से प्रकाश की गति लगभग 1,96,000 मील या 3,13,300 कि.मी. प्रति सेकण्ड निकली (आधुनिक मान से तकरीबन 13 हज़ार कि.मी. प्रति सेकण्ड ज़्यादा)। इस कार्य के दौरान फीज़ो ही पहले व्यक्ति थे जिन्होंने प्रकाश की तरंग लम्बाई को मापन के स्टैंडर्ड में शामिल करने की वकालत की और प्रकाश की गति नापने के तरीके को अन्तरिक्ष से पृथ्वी पर लाने वाले पहले व्यक्ति भी बने। पेरिस से प्रकाशित होने वाली एक अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका में फीज़ो ने अपने काम को प्रकाशित भी किया। उनके इस प्रयास को इतना सराहा गया कि फीज़ो का नाम 71 वैज्ञानिकों और इंजीनियरों के साथ एफिल टॉवर पर लिखा गया और रोचक बात यह है कि 1889 में विश्व मेले के अवसर पर जब एफिल टॉवर सामान्य जन के लिए खोला गया तो 72 में से केवल फीज़ो ही थे जो उस समय जीवित थे।

सन् 1856 में प्रकाश की गति को दर्शाने के लिए जर्मन वैज्ञानिक रुडोल्फ कोलरौश्च (Rudolf Kohlrausch) और वेबर (Wilhelm Weber) ने 'c' संकेत का इस्तेमाल किया जो एक अखबार में पहली बार छपा। इस तरह प्रकाश की गति को एक प्रतीक भी मिल गया।

लेकिन फीज़ो द्वारा पेश की गई विधि में कुछ व्यवहारिक समस्याएँ थीं। मसलन, इस प्रयोग के लिए काफी बड़ी जगह ज़रूरी थी। साथ ही, पहिए को एक समान रफ्तार से घुमाना थोड़ा कठिन था। पहिए और दर्पण के बीच की दूरी बहुत ज़्यादा हो जाने के कारण प्रतिबिम्ब स्पष्ट नहीं दिखता था। उपकरण की सीमाओं को देखते हुए फीज़ो इस विधि से प्रकाश की गति को हवा के अलावा किसी और माध्यम में नहीं निकाल पा रहे थे।

फूको का तरीका

फ्रांस के ही भौतिक शास्त्री फूको (Jean Leon Focault 1819-68) जो फीज़ो के अच्छे मित्र थे, पृथ्वी की गतियों का अध्ययन कर रहे थे। फूको ने धरती की अक्षीय गति को दिखाने के लिए एक लम्बे तार से बँधे पेंडुलम का उपयोग किया था, जो प्रयोग बाद में दुनियाभर में फूको पेंडुलम के नाम से जाना जाने लगा। यूँ तो फूको ने

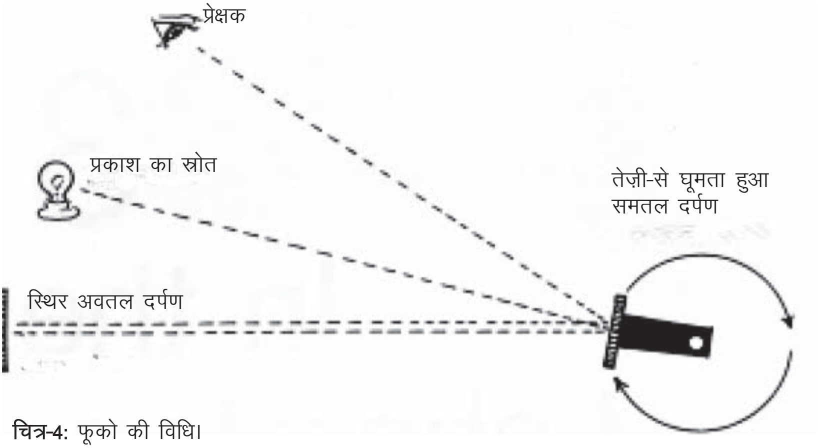

चित्र-4: फूको की विधि।

मेडिकल की पढ़ाई की थी किन्तु सर्जरी का काम इन्हें नहीं भाया, तो इन्होंने आगे भौतिकी में काम करना तय किया। 1849 में प्रकाशित प्रकाश की गति सम्बन्धी शोध पत्र पढ़कर फीज़ो के इस दोस्त ने उसके प्रयोग के दौरान आई चुनौतियों को हल करने की ठानी। इसके लिए फूको ने सारी चुनौतियों का गौर से अध्ययन किया, समझा तथा उन्हें सुलटाने के क्या उपाय हो सकते हैं, इस पर काम शुरू किया।

फूको ने सबसे पहले फीज़ो की तुलना में छोटा अवतल दर्पण लिया। चूँकि फीज़ो द्वारा उपयोग किए गए दाँतेदार पहिए में प्रतिबिम्ब धुँधला दिखता था, तो उन्होंने पहिए का विचार ही त्याग दिया और उसके बदले समतल दर्पण को घुमाने का सोचा जो कि आसानी-से स्थिर गति से घूम सकता है।

फूको के प्रयोग में दर्पण तेज़ी-से घुमाया जा रहा था। जब तक प्रकाश की किरण पहले दर्पण से टकराकर दूसरे दर्पण पर पड़ेगी, तब तक वह अपनी पहले वाली स्थिति से थोड़ा हट चुका होगा और इसलिए अब प्रकाश की किरण पर्दे पर दूसरे स्थान पर पड़ेगी। इस तरह अगर हमें दर्पण के घूमने की गति मालूम हो और यह भी मालूम हो कि प्रकाश की किरण पर्दे पर अपनी पहले वाली स्थिति से कितनी हटती है, तो प्रकाश की गति का पता लगाया जा सकता है।

फूको के उपकरण में एक तीव्र प्रकाश स्रोत से उत्सर्जित किरणें समतल दर्पण पर आपतित होती हैं

और परावर्तन के पश्चात् अवतल दर्पण पर पड़ती हैं। समतल दर्पण और अवतल दर्पण के बीच की दूरी, अवतल दर्पण की वक्रता त्रिज्या के बराबर रखी गई थी जिसके कारण किरणें अवतल दर्पण पर पड़ती थीं और परावर्तित होकर उसी मार्ग में वापस लौट जाती थीं। इस प्रकार किरणों द्वारा तय की गई दूरी अवतल दर्पण की वक्रता त्रिज्या (R) की दोगुनी अर्थात् 2R होगी।

समतल दर्पण को जब स्थिर रखा गया तो प्रकाश स्रोत का प्रतिबिम्ब वहीं बनता था जहाँ से प्रकाश किरण आई थी, परन्तु इसे तेज़ी-से घुमाने पर जब तक प्रकाश किरण अवतल दर्पण तक होकर वापस आती, इस घूम रहे समतल दर्पण की स्थिति थोड़ी बदल जाती थी जिससे प्रतिबिम्ब की स्थिति भी बदल जाती थी। यदि समतल दर्पण के प्रति सेकण्ड घूमने यानी परिक्रमण की संख्या n हो तो प्रकाशीय किरण को समतल दर्पण से अवतल दर्पण तक जाने और पुनः समतल दर्पण तक पहुँचने में लगने वाला समय कैसे निकलेगा? एक बार घूमने यानी एक परिक्रमण के दौरान दर्पण द्वारा घूमा गया कोण लगभग 360 डिग्री (यानी 2π रेडियन) होता है। अर्थात् एक सेकण्ड में n परिक्रमण के दौरान समतल दर्पण कुल मिलाकर दोनों के गुणनफल के बराबर अर्थात् $2\pi n$ रेडियन के बराबर कोण घूमेगा। तो समतल दर्पण यदि एक निश्चित कोण θ रेडियन से घूमता है तो इतना कोण घूमने में लगने वाला समय $\theta/2\pi n$ के बराबर होगा। ऐसे में दूरी और समय ज्ञात हो जाने पर प्रकाश की चाल का पता लगाया जा सकता है। θ का मान ज्ञात करने के लिए, फूको ने लेंस से दर्पण की दूरी और लेंस से प्रकाश स्रोत की दूरी को भी ध्यान में रखा, जो उसने अपने प्रयोग में 5 मीटर रखी थी। दर्पण को घुमाने के दौरान जो प्रतिबिम्ब विस्थापन हुआ, वह लगभग 0.7 मि.मी. था।

फूको ने अपने दर्पण को एक सेकण्ड में 433 बार घुमाया और ऐसा अवतल दर्पण चुना जिसकी वक्रता त्रिज्या 20 मीटर थी।

फूको की इस विधि से प्रकाश की गति लगभग 1,85,000 मील या 2,98,000 कि.मी. प्रति सेकण्ड प्राप्त हुई। यह गति आधुनिक मान के काफी करीब है।

फूको ने फीज़ो के प्रयोग के लगभग 12 वर्ष बाद 1862 में, कम समय में, कम जगह में, सुगमतापूर्वक प्रकाश की गति ज्ञात की। इसे आसानी-से एक प्रयोगशाला में भी किया जा सकता था। फूको के प्रयोग की खास बात यह रही कि समतल दर्पण और अवतल दर्पण के बीच वायु के अलावा अन्य माध्यम रखकर विभिन्न माध्यम में भी प्रकाश की गति

ज्ञात की जा सकती है।

फूको ने पानी में प्रकाश की गति पता करने के प्रयोग भी किए और पाया कि पानी में प्रकाश की चाल हवा की तुलना में कम थी। पानी में प्रकाश की गति 1,40,000 मील प्रति सेकण्ड थी। साथ ही, फूको ने अपने प्रयोग से पता किया कि विरल माध्यम में प्रकाश की चाल अधिक तथा सघन माध्यम में कम होती है। इसे इस उदाहरण से समझें कि हवा में प्रकाश का वेग लगभग 1,85,000 मील प्रति सेकण्ड था जबकि काँच में प्रकाश की गति 1,25,000 मील प्रति सेकण्ड थी। इस प्रकार फूको के प्रयोग से प्रकाश के तरंग सिद्धान्त को और बल मिला। (यह अलग बात है कि कुछ ही सालों में मामला फिर से पलट गया और यह कशम-कश बहुत समय तक जारी रही।)

लेकिन अभी भी ईथर माध्यम पर शंका बनी रही क्योंकि इस विचार का उत्तर नहीं मिल पा रहा था कि कैसे किसी स्रोत से प्रकाश निकलने पर ईथर में तरंगें उत्पन्न हो जाती हैं और इन्हीं तरंगों द्वारा प्रकाश का संचरण होता है।

तो अगला सवाल उठता है कि प्रकाश की चाल ईथर माध्यम में क्या होगी? ईथर जैसा कोई माध्यम है भी कि नहीं? इसे अगले पड़ाव में पढ़ते हैं।

...जारी

अंजु दास मानिकपुरी: अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, रायपुर (छत्तीसगढ़) में विज्ञान शिक्षण सम्बन्धी काम कर रही हैं। इससे पहले वे इन्दौर में रसायन विज्ञान की सहायक प्रोफेसर थीं।

इस लेख के लिए आइज़ेक एसिमोव की पुस्तक *हाऊ डिड वी फाइंड आउट अबाउट द स्पीड ऑफ लाइट* का सन्दर्भ के रूप में एवं कुछ चित्रों के लिए इस्तेमाल किया गया।

गणित और भौतिक जगत का सम्बन्ध

दीपक धर

इस लेख में मैं गणित के भौतिक जगत, विज्ञान तथा मानवीय ज्ञान के अन्य क्षेत्रों से सम्बन्ध पर चर्चा करूँगा। मेरा मत है कि सारा गणित मनुष्य जाति द्वारा ही बनाया गया है, और गणित की मूलभूत अवधा-रणाओं और निर्मितियों जैसे 'π' अंक का अब से एक लाख वर्ष पूर्व कोई अस्तित्व ही नहीं था ।

"प्रकृति की किताब गणित की भाषा में लिखी गई है और इसके अक्षर त्रिकोण, वृत्त और अन्य ज्यामितीय आकृतियाँ हैं। इनके बिना इस पुस्तक का एक भी शब्द समझना असम्भव है और इनके बिना व्यक्ति एक अँधेरी भूलभुलैया में व्यर्थ भटकता है।"

गैलीलियो गैलिली,
(1623 ई. में प्रकाशित पुस्तक 'इल साजियाटोरे' में)

गणित और विज्ञान के बीच क्या सम्बन्ध है? इस प्रश्न पर दर्शनशास्त्रियों ने बहुत सोचा और लिखा है। इनके बारे में मैंने पहले अपनी किशोरावस्था में पढ़ा था। तब शायद मैं आसानी-से बहकाया जा सकता था। मैंने जो पढ़ा, उसे बिना पर्याप्त सोचे ही सच मान लिया। परन्तु पिछले कुछ वर्षों में, इस विषय पर और विचार करने के बाद, कई बातें जो उस समय बिलकुल सही लगती थीं, अब गलत लगती हैं। इस लेख के द्वारा मैं अपना यह नवार्जित ज्ञान पाठकों से बाँटना चाहता हूँ। यहाँ प्रस्तुत यह दृष्टिकोण और विचारधारा केवल मेरी अपनी सोच का परिणाम नहीं है। कई लोगों ने कई बार इससे पहले इसकी चर्चा की है। मैं यहाँ पर इन्हें सिर्फ दोहरा रहा हूँ क्योंकि ये अभी भी प्रचलित मान्यता के विरुद्ध हैं।

वैज्ञानिक लोग अक्सर दार्शनिक विषयों पर बहस से दूर रहना पसन्द करते हैं, और युवा शोधकर्ताओं को भी यही सलाह दी जाती है। कह सकते हैं कि दार्शनिक विषय पर बहस को कुछ अशिष्ट व्यवहार माना जाता है, या फिर बढ़ती उम्र का

द्योतक। मुझे लगता है कि दर्शन शास्त्र की इस बदनामी का कारण है इस प्रकार की चर्चाओं की अपारदर्शिता। इस सम्बन्ध में डुबिस्लाव[1] की एक उक्ति बहुत सटीक है, "दर्शनशास्त्र कुछ खास तौर पर बनाए गए शब्दों का दुरुपयोग है, और इन शब्दों को इसी काम के लिए बनाया जाता है।[2]"

दार्शनिक विषयों से दूर रहने के विषय में मैं कहूँगा कि अधिकांश लोग इस बात से तो सहमत होंगे कि हमारे जीवन के अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न तथाकथित दार्शनिक प्रश्न होते हैं। हमें युवा पीढ़ी को ऐसी सलाह नहीं देनी चाहिए, सिर्फ इसलिए कि इस प्रकार के प्रश्नों का सिर्फ एक और सर्वसम्मत उत्तर नहीं होता है, या इसलिए कि इस पर कोई नया रिसर्च पेपर नहीं लिखा जा सकता। यह भी ज़रूरी नहीं है कि दार्शनिक विषयों की चर्चा हमेशा दुरूह और अबोधगम्य ही हो। यहाँ मैं अपनी बात को सरल सुगम भाषा में कहने का प्रयास करूँगा। युवावर्ग में दार्शनिक मुद्दों पर चर्चा उनको अपने आप सोचने को प्रेरित करती है, उनकी विवेकशक्ति को बढ़ाती है और शायद उनकी कुछ गलतफहमियों को दूर कर सकती है। यह मेरी आशा है।

एक बात और। अक्सर, दार्शनिक विषयों के पाठकों के कुछ विश्वास और मान्यताएँ होती हैं । यदि लेखक जो कहता है, वह इनसे मिलता है, तो पाठक सोचता है, "ठीक है, ठीक है, ठीक है।" लेकिन यदि, लेखक कुछ और कहता है जो पाठक की सोच से फर्क है, तो पाठक अपने विचारों के पूर्वाग्रह से, बिना कुछ और सोचे, लेखक की बात को खारिज कर देता है। बिना यह देखे कि क्या उनका पूर्वाग्रह उचित है, या नहीं, और लेखक की दलील में कुछ ताकत है या नहीं। आशा है कि आप ऐसा नहीं करेंगे।

जन सामान्य का गणित के बारे में नज़रिया

कई लोगों के लिए गणित के प्रति भाव मुख्यतः डर या अरुचि का होता है और कुछ और लोगों के लिए मुख्य भाव विस्मय, आदर और घोर श्रद्धा का होता है। पहले नज़रिए के लिए आप किसी भी स्कूल के 10-20 छात्रों से पूछताछ कर लें। उनमें से करीब आधे तो सहमत होंगे। दूसरे नज़रिए का उदाहरण वेदांग ज्योतिष का यह श्लोक है:

> "यथा शिखा मयूराणां, नागानां मणयो यथा।
> तद्वद् वेदांगशास्त्राणां गणितं मूर्धनि स्थितम्॥"

अर्थात्, जैसे मोरों की कलगी और नागों में मणि की स्थिति सबसे ऊपर मूर्धा पर है, वैसे ही वेदांग शास्त्रों में गणित का स्थान है। कुछ लोग मानते हैं कि ईश्वर एक गणितज्ञ है, या

शायद वह एक गणितज्ञ के आदेश पर काम करता है। महान जर्मन गणितज्ञ गाउस का मत था कि गणित विज्ञान के विषयों की साम्राज्ञी है।[3]

वेदांग से लिए गए श्लोक से हमें लगेगा कि यह हमारे पूर्वज ऋषियों के संचित ज्ञान का सार है जो हमें विरासत में मिला है और गणित के बारे में ऐसी सोच शायद उस समय की सर्वसम्मत मान्यता थी। फिर भी, हम यह पूछ सकते हैं कि प्राचीन या मध्यकालीन भारत में, किसी भी एक समय पर, कितने लोगों को गणितज्ञ कहा जा सकता था। यहाँ हम किसी ऐसे व्यक्ति या महिला को गणितज्ञ कहेंगे जो न केवल भास्कराचार्य या माधव का नाम जानता/जानती हो, बल्कि उनके काम से भी परिचित हो, और इसे किसी छात्र को समझा सके, चाहे उसने अपने आप गणित पर कोई ग्रन्थ न लिखा हो। यह संख्या 5 के आसपास होगी, या 50 के आसपास, या फिर 500 के आसपास? इस विषय पर हमारे इतिहास के जानकार लोगों के अनुसार, यह संख्या 5 के निकट होने की सम्भावना अधिक है, न कि 50 के निकट। अतः, हमें यह मानना पड़ेगा कि यद्यपि वेदांग में उपरोक्त श्लोक जैसा कुछ कहा गया है और भारतीय गणितज्ञों की कई बड़ी जानी-मानी और प्रसिद्ध उपलब्धियाँ हैं, भारतीय दर्शन परम्परा में व्यवहारिक रूप में गणित को इतना ऊँचा दर्जा नहीं दिया गया। गाउस का कथन शायद उनके विचारों को ठीक ही व्यक्त करता है, पर उसे निष्पक्ष तो नहीं कहा जा सकता। इस लेख में हम गणित के मानवीय ज्ञान के अन्य क्षेत्रों के साथ सम्बन्ध पर नारेबाज़ी और पूर्वाग्रह से मुक्त एक नज़र डालना चाहते हैं।

चलिए, हम अपनी बात इस प्रश्न से शुरू करते हैं: क्या गणित के अंक π का अब से एक लाख वर्ष पूर्व कोई अस्तित्व था? मेरा अनुमान है कि अधिकांश पाठक सोच रहे हैं, “हाँ, बेशक।” यहाँ पर मैं यह कहना चाहूँगा कि यह मामला इतना साफ नहीं है, यदि आप इस विषय पर कुछ देर सोचने के बाद उत्तर दें।

पहले तो यह समझना ज़रूरी है कि यहाँ ‘अस्तित्व’ शब्द का क्या अर्थ है। यह तो स्पष्ट है कि अंक π कोई भौतिक वस्तु, जैसे मेज़ या बृहस्पति ग्रह, नहीं है। अतः, अंक π का अस्तित्व उसी अर्थ में तो नहीं हो सकता है जिस अर्थ में मेज़ का अस्तित्व है। भौतिक वस्तुओं का कुछ द्रव्यमान होता है, और वे कुछ समय के लिए अन्तरिक्ष में कुछ सुनिश्चित स्थान घेरती हैं। अंक π एक मानसिक निर्मिति (मेंटल कन्सट्रक्ट) है और इसका अस्तित्व केवल एक मानसिक निर्मिति जैसा हो सकता है।

उदाहरण के तौर पर, मैं किसी आठ सर वाले ज़ेब्रा की बात करूँ। इस तरह का कोई पशु जगत में कहीं

नहीं है। पर, इन शब्दों को एक साथ लाकर मैंने एक मानसिक निर्मिति बना ली, और अब विचारों के संसार में इस विचार का अस्तित्व शुरू हो जाता है। अब इस तरह के ज़ेब्राओं के कुछ गुण-धर्म हम स्थापित कर सकते हैं। जैसे, अगर हम पूछें कि ऐसे आठ सर वाले ज़ेब्रा की कितनी आँखें होती हैं? तो उत्तर है कि सोलह क्योंकि हर एक सर पर दो आँखें हैं।

जो बात आठ सर वाले ज़ेब्रा के सम्बन्ध में सच है, वही बात युक्लिडीय ज्यामिति की संरचनाओं, जैसे त्रुटिहीन वृत्त (perfect circle) पर भी लागू होती हैं। भौतिक जगत में कहीं भी कोई त्रुटिहीन वृत्त नहीं मिलेगा। पर त्रुटिहीन वृत्त के सम्बन्ध में अनेक प्रमेय इसकी परिभाषा का प्रयोग करके ही स्थापित किए जा सकते हैं, जैसा कि ज्यामिति की पाठ्यपुस्तकों में किया जाता है।

सन् 1960 ईसवी में भौतिक विज्ञानी विगनेर ने एक लेख लिखा था जिसका शीर्षक था 'प्राकृतिक विज्ञान में गणित की अनपेक्षित उपयोगिता।[4] यह लेख विज्ञान सम्बन्धी दार्शनिक प्रश्नों के विचारकों के बीच बहुत विचार-विमर्श और चर्चा का विषय बना। विगनेर द्वारा प्रस्तुत विचारों का विस्तृत विश्लेषण किया गया, और उन पर अनेक टिप्पणियाँ लिखी गईं। इनमें से एक थी हैमिंग की टिप्पणी, और उनकी बात को आगे बढ़ाकर एडिलेड विश्वविद्यालय में प्रोफेसर डैरेक एबट ने एक लेख लिखा, जिसका शीर्षक था 'गणित की अपेक्षित अनुपयोगिता'।[5] इस लेख को पढ़ने पर मुझे एबट की दलीलें सही लगीं और अपने नज़रिए को बदलना पड़ा। इस लेख के माध्यम से, मैं इस बदले नज़रिए का प्रचार करना चाहता हूँ।

विगनेर का दृष्टिकोण

पहले मैं विगनेर की विचारधारा को संक्षेप में बताता हूँ। विगनेर अपना लेख दो मित्रों की एक कहानी से शुरू करते हैं जो हाई स्कूल में सहपाठी थे और कई वर्षों के बाद पुनः एक-दूसरे से मिलते हैं। वे एक-दूसरे से पूछते हैं कि क्या कर रहे हो। उनमें एक सांख्यिकी में शोधकर्ता है और अपने मित्र को अभी-अभी छपा अपना शोध पत्र दिखाता है। उसका

चित्र-1: भौतिक विज्ञानी यूजीन विगनेर

मित्र लेख में वर्णित नॉर्मल वितरण (normal distribution) के बारे में पूछता है, और पहला मित्र उसे किसी क्षेत्र में रहने वाले पुरुषों की लम्बाई के वितरण के उदाहरण से समझाता है। दूसरा मित्र तब पूछता है कि इस वितरण में प्रयुक्त संकेत चिन्ह π का क्या अर्थ है। जब उसे यह बताते हैं कि यह एक वृत्त की परिधि और उसके व्यास का अनुपात है, तो उसे विश्वास नहीं होता है। "तुम मुझसे मज़ाक कर रहे हो। वृत्त की परिधि का पुरुषों की लम्बाई से क्या सम्बन्ध?" विगनेर इस पर टिप्पणी करते हैं कि मित्र का ऐसा सोचना सहज बोध यानी कॉमनसेंस के अनुसार सही ही है। इस उदाहरण के द्वारा वे अपनी इस मुख्य थीसिस का प्रतिपादन करते हैं कि गणितीय निर्मितियाँ (mathematical construct) बहुत अनपेक्षित जगहों पर मिल जाती हैं, और वे भौतिक जगत का अत्यन्त परिशुद्ध वर्णन करने में मदद करती हैं।

विगनेर इसके बाद, 'गणित' और 'विज्ञान' शब्दों की व्याख्या करते हैं। इनका संक्षिप्त उल्लेख यहाँ भी करना आवश्यक है। वजह यह है कि इन शब्दों के क्या अर्थ हैं इसका कोई सर्वसम्मत उत्तर नहीं है। और यही नहीं, इनके मतलब समय के साथ बदलते रहे हैं।

उदाहरण के तौर पर, ओम के नियम के लिए ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिक जॉर्ज ओम, ने बिजली के तारों में विद्युत प्रवाह विषय पर लिखी अपनी पुस्तक में कहा कि उनका विश्वास है कि उनकी शोध भौतिक विज्ञान के एक क्षेत्र को गणित का भाग बना देगी, जो अब तक गणित का भाग नहीं था।[6] यह बात अब से लगभग दो सौ वर्ष पूर्व ही लिखी गई थी, पर यह बात आज के पाठक को काफी अटपटी लगती है। ओम का नियम तो भौतिक विज्ञान का नियम है। यह गणित का भाग कब से हो गया? स्पष्ट रूप से, ओम द्वारा प्रयुक्त गणित शब्द का अर्थ आज के प्रयोग से भिन्न है। हमें स्पष्ट करना पड़ेगा कि हम किस 'गणित' की बात कर रहे हैं।

मेरा अनुमान है कि ओम ने 'गणित' का उसी अर्थ में प्रयोग किया जिस अर्थ में आज के कुछ विद्यार्थी करते हैं जब वे कहते हैं कि समीकरण '$s=(gt^2)/2$' तो गणित है पर इसी का समानार्थी वाक्य 'मुक्त रूप से गिरते हुए पिण्ड के लिए त्वरण अचर है' गणित नहीं है। यहाँ पर ये विद्यार्थी भौतिक शास्त्र के नियमों के वर्णन में समीकरणों के उपयोग को गणित कहते हैं। पर यह सिर्फ गणित की भाषा का प्रयोग है; वर्णन का विषय गणित नहीं है। हम 'गणित' शब्द का प्रयोग इस अर्थ में नहीं करेंगे।

विगनेर द्वारा दी गई गणित की व्याख्या को समझना कुछ कठिन है: "गणित, कुछ विशेष परिभाषित नियम और उन पर कुशल संक्रियाओं का

विज्ञान है।"* इन संरचनाओं और संक्रियाओं के उदाहरण के तौर पर विगनेर सम्मिश्र संख्याओं (complex numbers), बीजगणित, और रेखीय ऑपरेटर्स (linear operators) का उल्लेख करते हैं। वह यह भी ध्यान दिलाते हैं कि कौन-सी निर्मितियाँ उपयोगी सिद्ध होंगी, इसका पता गणित के स्वयंसिद्ध सत्य (एग्ज़ीयम्स) द्वारा नहीं किया जा सकता। गणित की विज्ञान में उपयोगिता के लिए इस चयन का सही होना आवश्यक है, और यह चयन गणित के ढाँचे से बाहर है। "गणितज्ञ, इस प्रकार की अतिरिक्त निर्मितियों के बिना केवल कुछ मुठ्ठी भर रुचिकर प्रमेयों की ही स्थापना कर पाएगा।" इन निर्मितियों की उपयोगिता का पूरा श्रेय सिर्फ गणित को देना ठीक नहीं लगता।

विज्ञान के सम्बन्ध में विगनेर नोट करते हैं कि, हमारे चारों तरफ फैला जगत ज़्यादातर समझ के परे है, पर इस सिरदर्द देने वाली जटिलता के बीच कुछ नियम देखे जा सकते हैं। यह ही प्रकृति के नियम हैं, जैसे ग्रहों की गति से सम्बन्धित केपलर के नियम। विगनेर के अनुसार, यह चमत्कार ही है, और पूरी तरह से अनपेक्षित है, कि ऐसे कुछ नियम हैं और वे सब जगह, सब समय लागू रहते हैं। इससे भी अधिक विस्मय की बात है कि मनुष्य इन नियमों को खोज पाता है। इन नियमों के अध्ययन को ही विगनेर विज्ञान कहते हैं।

इस लेख के प्रारम्भ में दिए गैलिलियो के कथन के विषय में विगनेर कहते हैं, "एक भौतिकशास्त्री प्रकृति के नियमों को प्रतिपादित करने में कुछ गणितीय निर्मितियों का प्रयोग करता है, और गणितज्ञों द्वारा अध्ययन की गई निर्मितियों का केवल एक छोटा-सा भाग ही भौतिक विज्ञान में प्रयोग किया गया है। भौतिक विज्ञान में वैज्ञानिक द्वारा प्रकृति के अनुमानित नियमों के गणित की भाषा में प्रतिपादन को कई बार आश्चर्यजनक सफलता मिली है।"

वह इस आश्चर्यजनक सफलता के उदाहरण के तौर पर क्वाण्टम मैकेनिक्स में हीलियम परमाणु की निम्नतम उर्जा और लैम्ब शिफ्ट के आकलन का ज़िक्र करते हैं और कहते हैं कि, "भौतिक विज्ञान के नियमों के प्रतिपादन में गणित की उपयोगिता हमारे लिए चमत्कार और दैवी भेंट है जिसे न तो हम ठीक से समझते हैं और न ही हम उसके योग्य हैं। हमें इसका आभारी होना चाहिए और आशा करनी चाहिए कि यह भविष्य में भी कारगर रहेगी।"

एबट का विपक्षी दृष्टिकोण

अब मैं संक्षेप में एबट की विचारधारा का ज़िक्र करता हूँ। एबट दो परस्पर विपरीत दार्शनिक विचारधाराओं की बात करते हैं जिनमें से एक को वे प्लेटोवादी और दूसरे को प्लेटोविरोधी नाम देते हैं।

चित्र-2: डैरेक एबट

ग्रीक दार्शनिक प्लेटो ने ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त हमारे संसार के बारे में हमारे बोध की अपूर्णता की बात की थी। उन्होंने हमारी तुलना एक काल्पनिक गुफा में रहने वालों से की जो अपनी गुफा के बाहर कभी गए ही नहीं हैं और गुफा के बाहर के संसार का ज्ञान, जैसे उड़ते हुए पक्षी, उनकी गुफा की दीवारों पर पड़ने वाली परछाइयों को देखकर ही कर पाते हैं। इस प्रकार, वे केवल गुफा की दीवार पर पड़ने वाली परछाइयों को देख सकते हैं और असली पक्षियों का सीधा अनुभव उनकी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा असम्भव है। इस उदाहरण से प्लेटो ने निष्कर्ष निकाला कि हमारी ज्ञानेन्द्रियों के बोध से परे भी संसार है और वह ही वास्तविक संसार है तथा जिसका हमें अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा बोध होता है, वह वास्तविक संसार की छाया मात्र है।

इस विचार श्रृंखला के अनुसार, गणितीय आकार और संरचनाएँ, जैसे कि पूर्णांक इस वास्तविक बाह्य संसार का अंश हैं और उनका अस्तित्व है, चाहे कोई छाया को देखे या न देखे। इसी तरह, गणितीय अंकों, जैसे 7 और π का अस्तित्व तब भी था जब मानव जाति पृथ्वी पर अस्तित्व में भी नहीं थी। मैंने लेख की शुरुआत में एक लाख वर्ष का अन्तराल इसीलिए चुना था। यह अन्तराल बिग बैंग की आयु या पृथ्वी की आयु से बहुत कम है (पृथ्वी की आयु लगभग 400 करोड़ वर्ष है)। अब से एक लाख वर्ष पहले अधिकतर डायनासॉर मर चुके थे, पर मानव जाति और अन्य वानरों में ज़्यादा फर्क नहीं था।

इसके विपरीत दृष्टिकोण है कि हमारा सारा गणित मानव जाति के सांस्कृतिक विकास का ही फल है। गणित के सारे आकार और निर्मितियाँ भौतिक जगत के वर्णन के लिए मनुष्य द्वारा ही बनाई गई हैं। किसी प्लेटोविरोधी के मतानुसार, इस अखिल ब्रम्हाण्ड में कोई भी त्रुटिहीन वृत्त नहीं है, और अंक π सिर्फ एक उपयोगी मानसिक निर्मिति है।

एबट के अनुसार, उनके अनुमान में गणितज्ञों में लगभग 80 प्रतिशत

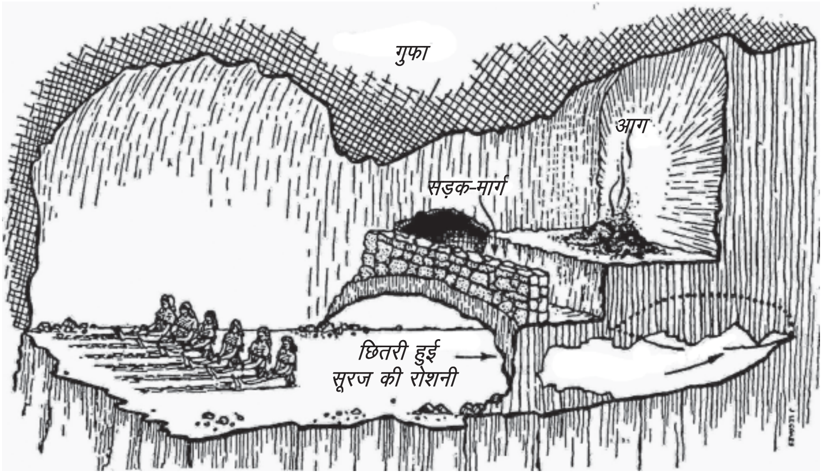

चित्र-3: प्लेटो का गुफा सिद्धान्त। यह मानव धारणा से सम्बन्धित एक सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त का उद्देश्य यह सुझाव देना है कि हम अपने जीवन में जो कुछ भी देखते हैं, वह एक भ्रम है। प्लेटो ने दावा किया कि इन्द्रियों के माध्यम से प्राप्त ज्ञान ही सम्पूर्ण नहीं है और वास्तविक ज्ञान हमें दार्शनिक तर्क के माध्यम से प्राप्त करना चाहिए।

गुफा के रूपक में, प्लेटो उन लोगों के बीच अन्तर करता है जो सत्य के लिए संवेदी ज्ञान प्राप्त करने की गलती करते हैं और जो लोग वास्तव में सत्य को देखते हैं।

लोग प्लेटोवादी होते हैं, पर इंजीनियरिंग या तकनीकी क्षेत्रों में काम करने वाले अक्सर प्लेटोविरोधी होते हैं। वह कहते हैं कि भौतिकी के वैज्ञानिक अक्सर 'छुपे हुए प्लेटोविरोधी' होते हैं: ऊपरी दिखावे में औरों के सामने वे अपने को प्लेटोवादी कहते हैं, पर अपने दिल में उनका विश्वास इस बात पर पक्का नहीं है।

गणित की अनपेक्षित उपयोगिता के विषय में एबट का मत है कि हमारे संसार की अधिकांश समस्याओं को समझने या उनके हल की खोज में गणित बहुत अधिक सफल नहीं है। यह सफलता प्रभावशाली तभी दिखती है जब हम केवल उन उदाहरणों पर ध्यान केन्द्रित करें जहाँ पर वह सफल रही है। जीव विज्ञान के वर्णन में गणित की उपयोगिता बहुत ज़्यादा नहीं है; मनोविज्ञान और समाजशास्त्र में तो और भी कम। हमने बहुत-से निराशाजनक उदाहरणों को छोड़, सारा ध्यान उन बहुत कम संख्या के उदाहरणों पर सीमित कर लिया है जहाँ गणित उपयोगी रहा है।

विगनेर द्वारा वर्णित केपलर की

समस्या पर एबट का मत है कि यह एक खास तौर पर चुना गया उदाहरण है और हमारे पूर्ण वर्ग संख्याओं से लगाव पर आधारित है। असल में, ग्रहों की कक्षा कुछ हद तक ही दीर्घवृत्त के आकार की होती है। वैसे भी, न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त, आइंस्टाइन के गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त का एक सन्निकटन (approximation) मात्र है। हम मानते हैं कि यह काफी अच्छा सन्निकटन है पर स्पष्ट रूप से यह इस बात का कोई सबूत नहीं है कि गणित का प्रयोग प्रकृति के नियमों के सत्य तक पहुँचने का एक जादुई नुस्खा है।

प्लेटोविरोधी मत के अनुसार, गणित मानव जाति की कल्पना का फल है। हमारे समस्त भौतिक विज्ञान द्वारा प्रतिपादित 'प्रकृति के नियम' एक सरलीकरण/ आदर्शीकरण/ सन्निकटन (simplification/ idealization/ approximation) की प्रक्रिया पर आधारित हैं और इस प्रकार वे कभी अपने आप में पूर्णतया त्रुटिरहित या अपरिवर्तनीय होने का दावा नहीं करते। प्रकृति की नियमितताओं (regularities) का वर्णन करने के लिए गणित को मनुष्य द्वारा ईजाद किया गया है और वह ब्रह्माण्ड की नियमितताओं के वर्णन की एक उपयोगी युक्ति मात्र है।

मेरा दृष्टिकोण

यदि गणित मनुष्य के अस्तित्व पर निर्भर नहीं है, तो हम यह देखने की कोशिश कर सकते हैं कि अन्य जन्तुओं जैसे कीड़े-मकोड़े, मेंढक, चिड़ियों या कुत्ते-बिल्लियों के जीवन में गणित का क्या रोल है या क्या रोल था। यही कारण है कि मैंने इस

चित्र-4: यह चित्र चिड़ियों के भौतिक जीवन में गणित के महत्व को दर्शाता है जहाँ देखा गया है कि यदि उनके घोंसले से एक या दो अण्डे निकाल दिए जाएँ तो वे पहचानकर उत्तेजित हो जाते हैं।

लेख की शुरुआत में ही एक लाख वर्ष पहले का समय चुना।

यदि कीड़ों और बैक्टीरिया की बात करें, यह कह पाना कठिन है कि गणित का उनके जीवन में कुछ रोल है। अगर पक्षियों की बात करें, तो उनके दिमाग का आकार कुछ बड़ा होता है और नर-मादा साथ-साथ रहकर बच्चों की देखभाल करते हैं। पक्षियों की कुछ प्रजातियों के बारे में देखा गया है कि यदि उनके घोंसले से एक अण्डा हटा दें, तो वे उत्तेजित हो गए दिखते हैं। इस बात से हम कह सकते हैं कि ये पक्षी दो अण्डों या तीन अण्डों में फर्क पहचान सकते हैं और इस आधार पर यह भी कह सकते हैं के वे तीन या चार की गिनती करना भी जानते हैं। चिड़ियों के मानसिक या भौतिक जीवन में गणित का इससे अधिक क्या रोल हो सकता है, इसकी कल्पना भी कठिन ही है।

अन्य जन्तुओं के जीवन में गणित के सम्भव रोल की चर्चा करने के पहले, यह उपयोगी होगा कि हम गणित के विभिन्न स्तरों के मध्य फर्क कर लें।

गणित के प्रयोग का सबसे पहला स्तर है, जिसे मैं गणित-पूर्व स्तर कहूँगा, अंकों और आकारों को पहचानने की जन्मजात क्षमता और गति के अनुमान की क्षमता। यह क्षमता मनुष्यों में ही नहीं, अन्य पशुओं में भी मिलती है। यह जैव-विकास का परिणाम है। यह जन्तुओं को अपने परिवेश में चलने-फिरने में, शिकार पकड़ने में, और शिकार बनने से बचने में काम आती है। इन सब कामों में यह स्पष्ट रूप से बहुत उपयोगी है। शायद जन्तुओं द्वारा प्रयुक्त गणित इस स्तर से बहुत आगे नहीं जाता है। इन जन्तुओं में मैं स्तनधारी जन्तु जैसे कुत्ते, घोड़े और यहाँ तक कि, वानरों को भी शामिल कर रहा हूँ।

गणित का दूसरा स्तर प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों को पढ़ाया जाने वाला गणित है। इसमें पूर्णांक या भिन्नों को जोड़ने, गुणा करने इत्यादि जैसी कुछ सामान्य संक्रियाएँ शामिल हैं और इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं।

तीसरे स्तर के गणित में बीजगणित में संकेत चिन्हों का प्रयोग, प्रमेय (theorem) और उपपत्ति (proof) के अर्थ, और $\sqrt{2}$ जैसे अपरिमेय (irrational) अंकों का ज्ञान शामिल है। इसे मैं हाईस्कूल स्तर का गणित कहूँगा। यह वह गणित है जो अब हम हाईस्कूल के छात्र-छात्राओं को पढ़ाते हैं और अब से कुछ हज़ार वर्ष पूर्व तक मानव जाति भी सिर्फ इतना ही गणित जानती थी। यह वाणिज्य और अभियांत्रिकी के लिए उपयोगी गणित है। चीज़ें खरीदने और बेचने के लिए हमारे लिए अंकों को जोड़ने और गुणा करने आदि की जानकारी ही पर्याप्त है। ऐसे घर या महल बनाने के लिए जो गिर न जाएँ, हमें ज्यामिति

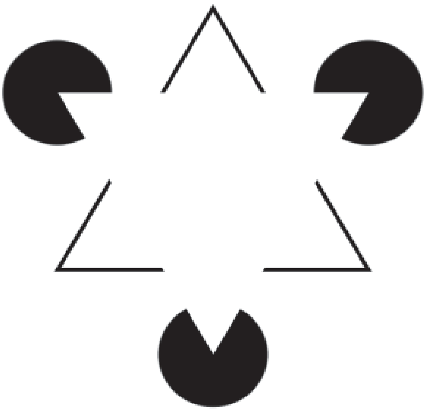

चित्र-5: कनिषा त्रिभुज के नाम से विख्यात दृष्टिभ्रम। यह एक दृष्टि-सम्बन्धी भ्रम है जिसमें आँख एक सफेद समबाहु त्रिभुज को देखती है जबकि वास्तविकता में ऐसा नहीं है।

की कुछ अवधारणाओं के प्रयोग की ज़रूरत पड़ सकती है। कोई खम्भा या छत कितना भार सँभाल सकेगी, यह उसकी मोटाई या लम्बाई की कुछ घातों पर निर्भर करता है और इसमें हम तृतीय स्तर के गणित का उपयोग करते हैं। इस उपयोग में गणित बहुत कारगर है, पर शायद यह कारगर होना अनपेक्षित नहीं है।

इसके ऊपर के स्तर को मैं उच्चतर गणित कहूँगा। इसमें वह सब विषयवस्तु शामिल है, जिन्हें निचले स्तरों में नहीं लिया गया। स्पष्टतः, विभिन्न स्तरों की सीमाएँ निश्चित करने में हमें कुछ हद तक चयन की स्वतंत्रता है। उदाहरण के तौर पर, मैंने अवकलन या समाकलन (differentiation or integration) को तृतीय स्तर में शामिल नहीं किया पर मैं कर सकता था।

जैव विज्ञानी जानते हैं कि मनुष्य के अलावा अन्य जन्तुओं में द्वितीय स्तर के गणित के प्रयोग का कोई विश्वसनीय प्रमाण अब तक नहीं मिला है। इस स्थिति में, यह कहना मुश्किल है कि मानव-हीन जगत में हम किस गणित की बात कर सकते हैं! (किसी और ग्रह में रहने वाले अतिविकसित क्लिंगॉन जाति के लोग कैसा गणित प्रयोग करते होंगे, इस विषय की चर्चा हम विज्ञान-गल्प के पाठकों के लिए छोड़ देते हैं।)

यदि यह कथन आपको बहुत अधिक मानवकेन्द्रित (एंथ्रोपोसेंट्रिक) लगे, तो मैं यह भी कहना चाहूँगा कि सवाल मानव या गैर-मानव का नहीं है। गणितीय क्षमता तो सब मनुष्यों में भी बराबर नहीं होती। विश्व के सभी देशों में हाईस्कूल के लगभग आधे विद्यार्थी तृतीय स्तर की गणित को समझने में कठिनाई महसूस करते हैं। यहाँ यह कहना भी ज़रूरी है कि गणित में पटुता के बिना भी उनके समाज में योगदान देने की या जीवन का आनन्द लेने की क्षमता में कोई कमी नहीं आती है।

किसी चीज़ को देखने पर पहचानने, और देखी हुई वस्तु में कुछ फर्क को नज़रअन्दाज़ करने (noise filtering), या उसके एक आदर्श

प्रतिरूप की कल्पना कर लेने (idealization) की सामर्थ्य मानव जाति ने जैव-विकास से पाई है। यह सामर्थ्य अत्यन्त जन्मजात है और इसका एक जाना-पहचाना उदाहरण है कनिषा त्रिभुज के नाम से विख्यात दृष्टिभ्रम (चित्र-5)। दोषयुक्त आँकड़ों (data) से एक उपयोगी जानकारी छानकर निकाल लेने की क्षमता निश्चय ही लाभदायक है, और अन्य जानवरों में भी पाई जाती है। अगर कोई हिरण आंशिक रूप से घास में छुपे शेर को पहचान लेता है तो यह उसे जीवित रहने में लाभकर है।

ग्रहों की कक्षाओं में दीर्घवृत्त को देखना, इसकी सन्निकटता और आदर्श प्रतिरूप ढूँढ़ना (approximation and idealization) भी इसी प्रवृत्ति का उदाहरण है। फिर भी, शायद हिरण में इस सामर्थ्य को गणित कहना ठीक नहीं होगा। मुझे लगता है कि विगनेर जिस 'गणित की अनपेक्षित उपयोगिता' की बात कर रहे थे, वह उच्चतर गणित था। जीव विज्ञान, मनोविज्ञान और भूगर्भ विज्ञान जैसे क्षेत्रों में गणित बहुत ज़्यादा उपयोगी नहीं है। अतः, मैं मान लेता हूँ कि यद्यपि विगनेर 'विज्ञान' की बात कर रहे थे, वे मुख्यतः भौतिक विज्ञान के बारे में ही सोच रहे थे। भौतिक विज्ञान में भी, कई क्षेत्रों में हम गणित के उपयोगी होने की आशा कर सकते हैं, जैसे क्रिकेट के खेल में आने वाली बॉल की गति के अनुमान के लिए। पर यह जानने के लिए कि क्रिकेट के खेल में गणित बहुत उपयोगी नहीं है, आपके लिए तेंदुलकर या कोहली होना ज़रूरी नहीं है। मैं एबट से पूरी तरह से सहमत हूँ कि गणित की अनपेक्षित उपयोगिता, अपने विचारक्षेत्र को बहुत सीमित करने का ही परिणाम है। यदि हम केवल उन विषयों की बात करें, जहाँ गणित बहुत उपयोगी है, तो यह उपयोगिता तो अपेक्षित ही है, अनपेक्षित नहीं।

इससे पहले हमने समीकरण $s=(gt^2)/2$ की बात की थी। इस समीकरण में अन्तर्निहित एक महत्वपूर्ण पूर्वधारणा (assumption) है कि चली गई दूरी को एक वास्तविक संख्या (real number) द्वारा अभिव्यक्त किया जा सकता है। सवाल उठता है कि हवा में उड़ती हुई एक बॉल द्वारा चली गई दूरी के बारे में क्या यह सच है? यदि दूरी को सेंटीमीटर में लिखें, तो क्या इसे दशमलव के 15वें स्थान तक निर्धारित करना सम्भव है? यहाँ हम प्लांक लेन्थ स्केल (10^{-35} मीटर) की बात नहीं कर रहे हैं जब गुरुत्वाकर्षण के क्वाण्टम सिद्धान्त के अनुसार अन्तरिक्ष की संरचना में बहुत फर्क आ जाता है। फिर भी, यह एक परमाणु के आकार का भी 10^5वाँ अंश है। थोड़ा-सा सोचने पर हम यह समझ पाएँगे कि इस परिशुद्धता तक बॉल के द्रव्यमान केन्द्र की परिभाषा भी कठिन है। उसको उपकरणों द्वारा

नापने की तो बात ही छोड़ दें। बॉल परमाणु उष्मीय गति के कारण इधर-उधर हिलते-डुलते रहते हैं और इस गति का आयाम 10^{-11} मीटर है। जब बॉल हवा में चलती है, तो हवा के साथ घिसने के कारण कुछ परमाणु बॉल से अलग होकर हवा के साथ बह जाते हैं, और यह कहना मुश्किल है कि द्रव्यमान केन्द्र के आकलन में इनका भी योगदान होना चाहिए या नहीं। हम यहाँ इसी बात के महत्व को दिखा रहे हैं कि हम भौतिक जगत की समस्या का सरलीकरण करते हैं और उसका एक आदर्श प्रतिरूप (idealized model) बनाते हैं जिसमें चली गई दूरी को एक वास्तविक संख्या द्वारा निरूपित करते हैं। इसके बाद ही कुछ गणित की युक्तियों द्वारा इस सरलीकृत प्रश्न का हल निकाला जा सकता है।

विगनेर इस बात की गम्भीरता से वाकिफ थे कि जिन प्रश्नों का हल गणित की मदद से मिल सकता है, वे सब सम्भव प्रश्नों का एक छोटा-सा अंश हैं। उसी लेख में विगनेर ने लिखा, "प्रकृति के समस्त नियम कुछ कथन हैं जो वर्तमान की स्थिति की कुछ जानकारी के आधार पर आगे भविष्य में क्या होगा, इस की जानकारी देते हैं। लेकिन वर्तमान स्थिति ऐसी क्यों है? संसार की वर्तमान स्थिति, जैसे कि पृथ्वी ग्रह का वेग कितना है, और सूरज क्यों है और हमारे चारों ओर का जगत ऐसा क्यों है, इस विषय में प्रकृति के नियम कुछ नहीं कहते।"

अब मैं प्लेटोवादी विश्व में अस्तित्व के अर्थ की बात करूँगा। हमारा विश्वास कि सामने रखी मेज़ का अस्तित्व है, उसको देखने और छूने के हमारी ज्ञानेन्द्रियों के अनुभव पर आधारित है। यह प्रत्यक्ष इन्द्रियजनित अनुभव नए अधिक संवेदनशील उपकरणों जैसे सूक्ष्मदर्शी, एक्स-रे कैमरा, रासायनिक सेंसरों और पार्टिकिल कोलाइडर आदि से आवश्यकतानुसार और बढ़ाया जा सकता है। विज्ञान इस भौतिक जगत की वस्तुओं जैसे मेज़ या बृहस्पति ग्रह या हिग्स बोसॉन के बारे में बात करता है। प्लेटो ने एक बहुत ही भ्रामक उपमा का प्रयोग किया था, और गुफावासियों के छाया सम्बन्धी अनुमान को छायाओं से ऊँचा दर्ज़ा दिया। हम चाहें तो मेज़ के विचार को मेज़ से ज़्यादा ऊँचा दर्ज़ा दे सकते हैं। पर क्या इससे मेज़ के विचार का अस्तित्व मेज़ से अधिक वास्तविक हो जाएगा?

समापन

गणित और भौतिक विज्ञान के बीच सम्बन्धों की बात गणितशास्त्रीयों और वैज्ञानिकों के बीच के संवाद की बात किए बिना अधूरी रह जाएगी। यहाँ मैं चेन निंग यांग द्वारा वर्णित कहानी को पुनः दोहराना चाहूँगा। यह एक भौतिक विज्ञानी के बारे में है जो

वैज्ञानिक सम्मेलनों में भाग लेने, और अलग-अलग जगहों पर भाषण देने के लिए पूरे अमेरिका में घूम रहा है। वह एक विश्वविद्यालय से जुड़े छोटे शहर में आता है, एक होटल में ठहरता है और अपने गन्दे कपड़ों को धोने के लिए उन्हें एक झोले में लेकर उपयुक्त लॉण्ड्री की तलाश में अपरिचित सड़कों और गलियों में भटक रहा है। काफी दूर इधर-उधर पैदल भटकने के बाद अन्ततः उसे एक दुकान दिखाई पड़ती है जिस पर साइनबोर्ड लटका है, 'यहाँ कपड़े धोए जाते हैं'। कुछ राहत महसूस करता वह दुकान के अन्दर घुसता है और अपने गन्दे कपड़ों से भरे झोले को दुकाने के काउण्टर पर रख देता है। काउण्टर के दूसरी तरफ कुछ चीनी जैसी शकल-सूरत का आदमी बैठा होता है। वह कुछ रूखेपन से पूछता है, "तुम्हें क्या चाहिए?" वैज्ञानिक कहता है, "मुझे अपने ये कपड़े धुलवाने हैं।" दुकान के काउण्टर पर बैठा चीनी आदमी कहता है, "हम यहाँ कोई कपड़े नहीं धोते हैं।" वैज्ञानिक को बहुत गुस्सा आता है और वह दुकान पर लटके साइनबोर्ड की तरफ इशारा करके कहता है, "लेकिन यहाँ तो साफ-साफ लिखा है कि यहाँ कपड़े धोए जाते हैं।" काउण्टर के पीछे बैठा चीनी व्यक्ति मुस्कुराता है, "अरे! वह...। यहाँ पर हम सिर्फ साइनबोर्ड बनाते हैं।"

मुझे यह कहानी पसन्द है क्योंकि यह भौतिकी के वैज्ञानिकों की गणितज्ञों से अपेक्षित मदद न मिलने पर उनके मन में पैदा हुई कुण्ठा को दिखाती है। अक्सर किसी भी प्रश्न पर गणितज्ञों और भौतिक वैज्ञानिकों के सोचने का ढंग अलग होता है।

अब इस लेख के शुरू में π के अस्तित्व के बारे में उठाए प्रश्न पर लौटते हैं। मैंने आपको समझाने का प्रयास किया है कि इस प्रश्न का उत्तर 'नहीं' ही होना चाहिए। एक मानसिक अवधारणा का अस्तित्व तब ही कहा जा सकता है जब इसे किसी ने पहली बार सोचा हो। इससे भी पहले इसके अस्तित्व का कोई अर्थ नहीं है। जो बात यहाँ π के लिए कही गई, वही गणित की अन्य जटिलतर निर्मितियों और संरचनाओं के लिए भी सच है। इस वृहत्तर थीसिस पर विभिन्न पहलुओं और दृष्टिकोणों से चर्चा के लिए पुस्तक[7] में उपलब्ध निबन्धों के संग्रह को देखें। यह इंटरनेट पर निःशुल्क उपलब्ध है। शायद आपने महान गणितज्ञ क्रोनेकर का यह कथन पढ़ा होगा, "ईश्वर ने सिर्फ पूर्णांक बनाए। बाकी सब गणित मनुष्य का बनाया हुआ है।" लेकिन मुझे लगता है कि ईश्वर भी मनुष्य की बनाई हुई निर्मिति है। मैं इसी निबन्ध संग्रह में छपे एस. वेनमैकर्स[8] द्वारा लिखे एक निबन्ध की दो पंक्तियों के साथ इस लेख का अन्त करता हूँ:

"भौतिक विज्ञान के नियम गणित की मदद से अभिव्यक्त किए जा सकते

हैं; यह इसी बात का द्योतक है कि नियमितताओं का (यह) विवरण हमारा ही बनाया हुआ है। जब हम प्रकृति की किताब को, जिसकी बात गैलिलियो ने की थी, खोलते हैं, तो उसे अपनी ही हस्तलिपि से भरा पाते हैं।"

दीपक धर: इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्नातक और भारतीय तकनीकी संस्थान (आई.आई.टी.), कानपुर से स्नातकोत्तर। कैलिफोर्निया इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी से पीएच.डी. करने के बाद 1978 से 2016 तक टाटा मूलभूत अनुसन्धान संस्थान (TIFR), मुम्बई में कार्यरत रहे। वर्तमान में भारतीय विज्ञान शिक्षा एवं अनुसन्धान संस्थान, पुणे (IISER, Pune) के भौतिकी विभाग में आचार्य हैं।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: इष्ट विभु: लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ से भौतिक विज्ञान में पीएच. डी.। वर्तमान में युवराज दत्त महाविद्यालय, लखीमपुर खीरी में भौतिक विज्ञान के एसोसिएट प्रोफेसर के पद पर कार्यरत हैं।

अन्त टिप्पणियाँ:

1) W. Dubislav, Die Philosophie der Mathematik in der Gegenwart (Berlin: Junker and Dunnhaupt Verlag, 1932), p.1, सन्दर्भ (3) से।

2) Philosophy is the misuse of a terminology which was invented just for this purpose.

3) कॉर्ल एफ़. गाउस, वोल्फ़गांग सारटोरियस फॉन वाल्टर्सहाउज़ेन द्वारा लिखित "Gauss zum Gedächtniss (1856)" से; "Mathematics is the queen of sciences and number theory is the queen of mathematics" विकीपीडिया से।

4) यूजीन विगनेर, Unreasonable Effectiveness, https://plus.maths.org/content/unreasonable-effectiveness

5) डैरेक एबट; Reasonable Ineffectiveness, https://pdfs.semanticscholar.org/462d/7b6b1ee8243b6aa8897be3cf306239fb43c6.pdf

6) जॉर्ज ओम, "The Galvanic Circuit, Investigated Mathematically, Ed. Richard Taylor (New York, Johnson Reprint of the 1841 edition, 1966)" मूल जर्मन में 1826 में प्रकाशित पुस्तक का अनुवाद।

7) Trick or Truth: The Mysterious Connection Between Physics and Mathematics, Eds. Anthony Aguirre, Brendan Foster and Zeeya Merali, Springer, 2016. https://www.nwcbooks.com/download/trick-or-truth/

8) एस. वेनमैकर्स, Children of the Cosmos, सन्दर्भ (7) से।

शिक्षकों की कलम से

मातृभाषा आधारित बहुभाषी शिक्षा क्यों लाज़मी?

संजय गुलाटी

एक से चार अप्रैल 2013 के बीच मुझे आधिकारिक रूप से छत्तीसगढ़ एस.सी.ई.आर.टी. टीम के साथ बस्तर जाने का अवसर मिला था। बस्तर जाने का यह मेरा पहला मौका था। इस दौरे का मुख्य उद्देश्य छत्तीसगढ़ में चल रहे पाठ्यचर्या में बदलाव के लिए पालकों, शिक्षकों, बच्चों, शिक्षक-प्रशिक्षकों आदि से चर्चा करना था। इसके लिए डाईट ने बस्तर ज़िले के नेतानार संकुल की दो प्राथमिक शालाओं, शा.प्रा. शाला किचकरास और चैखुर का चयन किया था। ये दोनों स्कूल ज़िला मुख्यालय से लगभग 35 कि.मी. की दूरी पर घने जंगल में स्थित हैं। इस क्षेत्र में ज़्यादातर धुरवा जनजाति के लोग रहते हैं।

पूरी टीम सुबह करीब दस बजे किचकरास स्कूल पहुँची। यदि आप कार से जा रहे हैं तो आपको करीब 300-400 मीटर पहले ही उसे छोड़ना होगा क्योंकि इसके आगे संकरे रास्ते पर कार नहीं जा सकती। स्कूल में उस समय 15 बच्चे, दो शिक्षक और एक रसोइया उपस्थित थे। शिक्षक स्थानीय नहीं थे, वे करीब 600 कि.मी. दूर से आकर यहाँ अपनी सेवाएँ दे रहे थे। बच्चों की संख्या के बारे में पूछने पर बताया गया कि कुछ बच्चे अपने माता-पिता के साथ लकड़ी,

महुआ, कपास आदि बीनने के लिए जंगल गए हैं। स्कूल में उपस्थित दो-तिहाई बच्चे कक्षा-4 के थे, बाकि सभी 1 से 3 तक की कक्षाओं के थे।

बच्चों से मेल-मिलाप

सभी बच्चों ने नमस्ते कहकर टीम का स्वागत किया। टीम के सदस्य भी उत्साहित होकर बच्चों से पूछने लगे, "कौन-सी कक्षा में पढ़ते हो, तुम्हारा नाम क्या है, कहाँ रहते हो?" आदि। परन्तु यह क्या, बच्चों की तरफ से कोई जवाब ही नहीं आ रहा था। टीम ने सोचा कि नए लोगों को देखकर बच्चे संकोच कर रहे हैं, तो उनका हौसला बढ़ाने के लिए उनसे और बातें करना शुरू कीं, परन्तु बच्चों ने फिर भी कोई जवाब या प्रतिक्रिया नहीं दी। इस पर चौथी कक्षा के एक बच्चे ने कहा, "ये लोग हिन्दी नहीं समझते हैं।" टीम ने शिक्षकों से पूछा तो शिक्षक बताने लगे कि उन्हें छोटे बच्चों को पढ़ाने में बहुत दिक्कतों का सामना करना पड़ता है। बच्चे और उनके माता-पिता घर में, गाँव में, बाज़ार में धुरवी भाषा या अन्य स्थानीय भाषा का उपयोग करते हैं। बच्चों के पास स्कूल के अलावा हिन्दी भाषा को सीखने और उपयोग करने के मौके नहीं के बराबर हैं। शिक्षकों ने यह भी बताया कि उन्हें स्वयं स्थानीय भाषा का कोई ज्ञान नहीं है। वे बच्चों से ही कुछ शब्द सीखने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार बहुत देर तक बच्चों के साथ कोई सार्थक बातचीत नहीं हो पाई। इस बीच कुछ बच्चे, जो जंगल गए थे, वापस आ गए और अन्य बच्चों के साथ बैठ गए।

इस दौरान शिक्षकों ने रसोइए को बुलाया, उसे हिन्दी, धुरवी तथा अन्य स्थानीय भाषा का अच्छा ज्ञान था। रसोइए ने दुभाषिए की भूमिका निभायी और बच्चों के साथ बातचीत शुरू हुई। टीम के सदस्यों ने बच्चों से पाठ्यपुस्तक के कुछ चित्रों पर बातचीत की। वे हिन्दी में कुछ शब्द बोल पाने में

भी कठिनाई महसूस कर रहे थे। कक्षा-4 के कुछ बच्चे हिन्दी में पहाड़े बोल पा रहे थे। बच्चों के भोजन अवकाश का समय होने के कारण जब टीम बच्चों के पालकों से मिलने गाँव पहुँची, तो ज़्यादातर पुरुष जंगल, खेत में काम पर गए हुए थे। माताएँ घर के काम में व्यस्त थीं, वे भी हिन्दी में अपने आप को सहज नहीं महसूस कर रहीं थीं। उसके बाद टीम जब दूसरे स्कूल चैखुर पहुँची तो वहाँ भी किचकरास स्कूल जैसा ही अनुभव हुआ।

कक्षा में स्थानीय भाषा का प्रवेश

इस दौरे ने एस.सी.ई.आर.टी. की टीम पर गहरी छाप छोड़ी। रायपुर में संचालक महोदय से बात करने के उपरान्त यह निर्णय लिया गया कि प्रयोग के तौर पर बस्तर ज़िले के धुरवा बाहुल्य इलाकों के स्कूलों में कक्षा-1 से स्थानीय भाषा का उपयोग कर कक्षाएँ संचालित की जाएँ।

प्रारम्भिक तैयारी के रूप में धुरवा संस्कृति और भाषा को जानने व समझने वाले शिक्षकों और समुदाय के सदस्यों की एक टीम बनाई गई। इस टीम के साथ, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा - 2005 के सिद्धान्तों और धुरवा बच्चों के सांस्कृतिक सन्दर्भों का ध्यान रखते हुए कक्षा-1 के लिए धुरवा-हिन्दी द्विभाषी प्रायमर पर काम करना प्रारम्भ किया गया। प्रायमर बनाने के लिए धुरवा समाज के सामुदायिक ज्ञान का उपयोग किया गया। कक्षा में शिक्षण के माध्यम के रूप में बच्चों की मातृभाषा का उपयोग करते हुए बच्चों को दूसरी भाषा हिन्दी सिखाने का कार्य बीस स्कूलों में (जहाँ 100% धुरवा बच्चे और शिक्षक थे) सत्र 2015-2016 से किया गया। सत्र 2017-18 में इसे कक्षा-3 तक बढ़ाया गया। द्विभाषी प्रायमर के साथ-साथ कक्षा-1 के लिए धुरवी भाषा में गणित की अभ्यास पुस्तिका व शिक्षकों के लिए शिक्षक-निर्देशिका का निर्माण भी किया गया। कुल 52 स्कूलों में करीब 3000 बच्चों को इस प्रयोग का फायदा मिला। शिक्षकों ने बताया कि मातृभाषा के उपयोग से स्कूल में बच्चों की सक्रियता बढ़ी, उनकी उपस्थिति में सकारात्मक बदलाव आए, पालकों और समुदाय का स्कूल से जुड़ाव बढ़ा, एवं बच्चों ने शैक्षिक कौशलों में अच्छा प्रदर्शन किया।

बच्चे जब स्कूल आते हैं तो वे अपने जाने-पहचाने सन्दर्भों में दैनिक जीवन में उपयोगी मूर्त वस्तुओं के बारे में अपनी मातृभाषा में बातें कर सकते हैं। वे धारा प्रवाह बोल सकते हैं, उन्हें बोली जाने वाली भाषा के बुनियादी व्याकरण और बहुत-से मूर्त शब्दों का ज्ञान भी होता है। वे अपनी सारी ज़रूरतें मातृभाषा में बता सकते हैं। उनमें आपसी बातचीत का बुनियादी कौशल होता है। इस प्रकार का ज्ञान और कौशल कक्षा-1 के बच्चों के लिए पर्याप्त होता है, जहाँ शिक्षकों से यह उम्मीद की जाती है कि वे बच्चों से उन सभी विषयों पर बातचीत करें

विविध संस्कृति, जाति और भाषा के बच्चे सीखने के उद्देश्य से स्कूल आते हैं और यहाँ वे एक समग्र भाषाई समुदाय बनाते हैं। हर बच्चा जन्मजात भाषाई क्षमता के साथ कक्षा में आता है। कक्षा में बच्चे की भाषा का उपयोग करने की अवधारणा को बहुभाषी शिक्षा कहा जाता है। इस प्रकार की शिक्षा बच्चों के सन्दर्भों और संस्कृति पर आधारित होती है। यह ज्ञान के सृजन, सामुदायिक भागीदारी और शाला-समुदाय के सम्बन्धों को प्रोत्साहित करती है। बहुभाषी शिक्षा सामाजिक न्याय और शिक्षा में समता हासिल करने का सशक्त माध्यम है।

जिसके बारे में बच्चों का अपना पूर्व-अनुभव एवं ज्ञान होता है।

गर शिक्षण का माध्यम हो मातृभाषा

बड़ी कक्षाओं में बच्चों को बौद्धिक और भाषिक रूप से अधिक अमूर्त अवधारणाओं को समझना होता है। उन्हें अपने परिवेश से दूर की बातों को समझने और उन पर बातें करने की आवश्यकता होती है, जैसे भूगोल व इतिहास की पाठ्यवस्तु में। कई बार ऐसी बातों को भी समझना होता है जिन्हें देखा नहीं जा सकता, जैसे गणित की अवधरणाएँ या सच्चाई, ईमानदारी, प्रजातंत्र जैसे शब्दों एवं उनसे सम्बन्धित मूल्यों का अर्थ आदि। उन्हें भाषा और अमूर्त तर्क के आधार पर बिना मूर्त वस्तुओं की मदद से समस्या सुलझाने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार की संज्ञानात्मक-अकादमिक भाषाई कुशलता की आवश्यकता कक्षा-3 से आगे होती है और यह कुशलता बच्चों में धीरे-धीरे ही विकसित होती है। इस बात की आवश्यकता है कि बच्चों में इस प्रकार की अमूर्त क्षमता उनकी मातृभाषा आधारित ज्ञान के आधार पर ही विकसित हो। यदि मातृभाषा आधारित संज्ञानात्मक-अकादमिक भाषाई कुशलता के विकास का अवसर बच्चों को स्कूल में आने के बाद न मिले तो उन्हें किसी भी भाषा में अमूर्त चिन्तन के विकास के अवसर नहीं मिल पाएँगे।

यदि स्कूलों में शिक्षण एक ऐसी भाषा में होता है जो स्थानीय/आदिवासी/अल्पसंख्यक बच्चे नहीं जानते हैं, तब वे बिना कुछ समझे प्रारम्भिक वर्षों में कक्षाओं में बैठते हैं और बिना समझे यांत्रिक रूप से शिक्षक की बातों को दोहराते हैं। इस प्रकार उनमें भाषा की मदद से चिन्तन क्षमता का विकास नहीं हो पाता है और वे अन्य अकादमिक विषयों में भी पिछड़ जाते हैं। इसी कारण ये बच्चे पढ़ना, लिखना और अन्य स्कूली विषयों को सीखे बिना ही स्कूल छोड़ देते हैं।

यदि बच्चों को उनकी मातृभाषा,

स्कूल में शिक्षण के माध्यम के रूप में मिले तो वे पढ़ाई गई बातों को समझेंगे, मातृभाषा में संज्ञानात्मक-अकादमिक भाषाई कुशलता विकसित कर सकेंगे और इस बात की पूरी सम्भावना होगी कि वे एक चिन्तनशील व्यक्ति के रूप में अपनी शिक्षा को जारी रखेंगे। शोध लगातार यह बताते हैं कि स्कूल के प्रारम्भिक सालों में मातृभाषा में शिक्षण की वजह से बच्चों के शाला त्यागने की दर में गिरावट आती है और यह कार्यक्रम 'हाशिए पर' रुके समूहों को शिक्षा के प्रति अधिक आकर्षित करता है। जिन बच्चों को मातृभाषा आधारित बहुभाषी शिक्षा का लाभ मिलता है, वे अपनी दूसरी भाषा में भी अच्छा प्रदर्शन करते हैं।

बच्चे जब अपनी मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण करते हैं तो उनके पालक भी बच्चों के सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। पालकों का इस प्रकार का जुड़ाव बच्चों के बौद्धिक और सामाजिक विकास के लिए महत्वपूर्ण होता है। भाषाई-अल्पसंख्यक बच्चों के पालक प्राय: इस प्रकार की सहायता प्रदान करने में असमर्थ होते हैं।

बहुभाषी शिक्षा कार्यक्रम घर की संस्कृति, स्कूल की संस्कृति और समाज के बीच एक पुल का काम करता है। यह कार्यक्रम केवल बच्चों के सीखने के स्तर में ही सुधार नहीं करता है बल्कि सहिष्णुता बढ़ाता है और सांस्कृतिक विविधता के सम्मान को बढ़ावा देता है।

प्रारम्भ में बहुभाषी शिक्षा की लागत एकल-भाषा शिक्षा से अधिक होती है परन्तु इस कार्यक्रम के दीर्घकालिक लाभ प्रारम्भिक निवेश से बहुत अधिक होते हैं। बहुभाषी शिक्षा से उन हज़ारों बच्चों की क्षमताओं की पहचान कर उनका उपयोग किया जा सकता है जो समाज से छुपी रहती हैं।

***

इस प्रकार मातृभाषा आधारित बहुभाषी शिक्षा बच्चों में स्वयं को व्यक्त करने के साथ-साथ स्कूलों में अलग-अलग विषयों की अवधारणाएँ सीखने का विश्वास देती है। यह कार्यक्रम बच्चों को उनकी भाषा, संस्कृति, उनके पालकों और समुदाय से अलग होने से रोकते हैं; और हम ऐसी स्थिति से भी बचते हैं जहाँ बच्चों को एक अलग भाषा का उपयोग करने के कारण परेशान किया जाता है, जिसके कारण वे अपनी संस्कृति और विरासत के बारे में नकारात्मक सोचने को मजबूर होते हैं।

संजय गुलाटी: मेकेनिकल इंजीनियरिंग में स्नातक। 25 वर्षों से शिक्षा के क्षेत्र में काम कर रहे हैं। बस्तर, छत्तीसगढ़ की धुरवा जनजाति के लिए बहुभाषी शिक्षा लागू की। लेंग्वेज एंड लर्निंग फाउण्डेशन, नई दिल्ली के अन्तर्गत छत्तीसगढ़ के राज्य समन्वयक के रूप में काम किया। वर्तमान में स्वतंत्र रूप से काम कर रहे हैं।

सभी फोटो: संजय गुलाटी।

बैंकिंग प्रणाली के लिए भरोसा और नियमन

अरविंद सरदाना

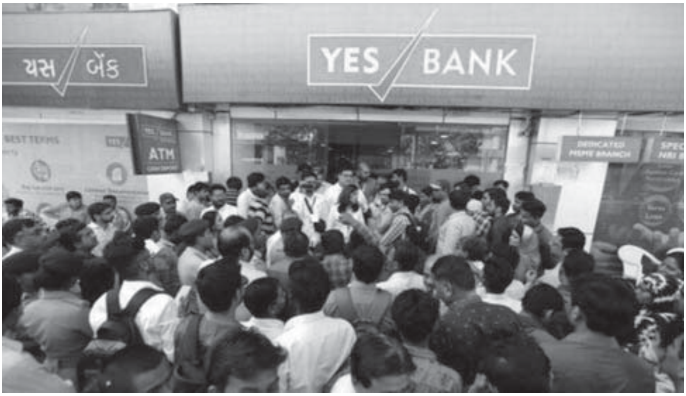

कुछ ही दिन पहले लोगों में यस बैंक से पैसे निकालने को लेकर भगदड़ मच गई थी। यह तब हुआ था जब रिज़र्व बैंक ने घोषित कर दिया था कि यह बैंक संकट में है और इसका अधिग्रहण कर लिया जाएगा। लोग पैसा निकालने को दौड़ पड़े और इसे ही 'बैंक पर टूट पड़ना' कहा जाता है। हर कोई पैसा निकालने को भागता है। अलबत्ता, लोगों को बैंक के दरवाज़ों पर इस सूचना का सामना करना पड़ा कि वे सिर्फ 50,000 रुपए निकाल सकते हैं, उससे अधिक नहीं। इस बात को भूल जाइए कि वह पैसा आपका ही है और बैंक ने वायदा किया था कि मांग करने पर वह आपको आपका पैसा दे देगा। रिज़र्व बैंक ने चेक या इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से बैंक के सारे लेन-देन पर रोक लगा दी। आप अपने खाते से न तो पैसा दे सकते हैं और न ही खाते में पैसा प्राप्त कर सकते हैं। यदि लोगों को छूट मिलती तो सम्भवत: सारा पैसा निकाल लिया जाता लेकिन सच्चाई यह है कि बैंक के पास इतना पैसा ही नहीं होता। वह अपने सारे जमाकर्ताओं का पैसा लौटाए बगैर ही धराशायी हो जाता। इसीलिए रिज़र्व बैंक ने लोगों को रोक दिया।

यदि बैंक के पास अपने सारे खाताधारकों को लौटाने के लिए पैसा नहीं होता, तो वह काम कैसे करता है? वह लोगों को यह वायदा कैसे करता है कि वह उनकी मांग पर या जब वे अपना पैसा वापिस लेने को दौड़ पड़ेंगे तो वह भुगतान कर देगा, जबकि उसके पास भुगतान के लिए पैसा ही नहीं होता?

भरोसा

बैंक पर टूट पड़ने की घटना इस बात को समझने का अच्छा अवसर है कि बैंक काम कैसे करता है। सारे बैंक भरोसे पर काम करते हैं। भरोसा वैसे तो एक अमूर्त चीज़ है लेकिन उसी तरह हमारे आसपास मौजूद होता है जैसे हवा। लोगों को भरोसा होना चाहिए कि जो पैसा वे जमा करते हैं, वह सुरक्षित है और सरकार रिज़र्व बैंक के माध्यम से पूरे तंत्र की निगरानी कर रही है। रिज़र्व बैंक की भूमिका को इस रूप में समझा जा सकता है कि वह एक चौकीदार है जो सारे जमाकर्ताओं की सुरक्षा सुनिश्चित करता है और एक रेफरी भी है जो इस बात का ख्याल रखता है कि सारे बैंक नियमों का पालन करें।

सब लोग पैसा निकालने को नहीं दौड़ते क्योंकि उन्हें लगता है कि उनका पैसा सुरक्षित है। ऐसी स्थिति में औसत का नियम काम करता है। किसी भी कार्य दिवस पर औसतन कुछ लोगों को ही नगदी की ज़रूरत होती है और यदि बैंक अपने पास थोड़ी नगदी रखें, तो वे माँगे जाने पर भुगतान का अपना वायदा निभा सकते हैं। बैंक को अनुभव से अन्दाज़ लग जाता है कि प्रतिदिन कितनी नगदी की ज़रूरत होगी। देश का केन्द्रीय बैंक होने के नाते रिज़र्व बैंक यह सुनिश्चित करता है कि प्रत्येक बैंक के पास पर्याप्त नगदी रहे। इसके लिए वह सबके लिए कुछ नियम निर्धारित करता है। रिज़र्व बैंक देश की सारी बैंक शाखाओं के लिए मुद्रा - सिक्के और नोट - के मुद्रण व प्रवाह की भी व्यवस्था करता है। उसे यह सुनिश्चित करना होता है कि देश में पर्याप्त मुद्रा हो और किसी बैंक को अभाव का सामना न करना पड़े। जब यह व्यवस्था काम करती है, तो आप हड़बड़ी नहीं करते और आराम-से बैंक या एटीएम से ज़रूरत के मुताबिक पैसा निकालते हैं। बैंक के पास पर्याप्त नगदी होती है, जो वास्तव में उसके पास जमा राशि का एक छोटा हिस्सा ही होता है। लोगों को भरोसा रहता है कि उनका पैसा सुरक्षित है क्योंकि माँग पर नगद मिलता रहता है। यदि भरोसा टूट जाए और हर कोई एक ही समय पर पैसा निकालने को दौड़ पड़े, तो बंटाधार हो जाता है। बैंक का धराशायी होना तय है क्योंकि उसके पास कभी इतना पैसा नहीं होगा कि वह सारे जमाकर्ताओं को भुगतान कर सके।

बैंक-जमा: धन का एक रूप

बैंक विशेष प्राणि हैं। वे किसी सेफ डिपॉज़िट लॉकर की तरह काम नहीं करते जिनके अन्दर आपका पैसा रखा रहे और जब चाहे निकाला जा सके। मान लीजिए आपने बैंक में 1,00,000 रुपए नगद जमा किए हैं। बैंक क्या करता है? वह इस पैसे के लिए आपके नाम का एक खाता खोल देता है और इसका हिसाब रखने के लिए आपको एक पासबुक दे देता है और ज़रूरत के हिसाब से पैसा निकालने के लिए एक एटीएम कार्ड दे देता है। आपका पैसा अब महज़ एक बैंक खाता संख्या है। बैंकों ने माँग-जमा (demand deposits) के रूप में एक नए किस्म के धन की रचना की है। ये उनके बही खाते में संख्याएँ होती हैं जो यह दर्शाती हैं कि बैंक आपको 1 लाख का देनदार है। जब आपको पैसे की ज़रूरत होती है, आप इस जमा के एवज में पैसा निकालते हैं। आपकी जमा संख्या बदलती रहती है। जैसे कि ऊपर बताया गया था, औसतन हर दिन कुछेक लोग ही पैसे की माँग करेंगे। लिहाज़ा, कुल जमा का एक छोटा हिस्सा ही नगदी के रूप में रखा जाए, तो माँग करने वाले किसी भी व्यक्ति को भुगतान का वायदा निभाना सम्भव होगा।

बैंकों के नियमों में एक नियम ऐसा है:

‘भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 के अनुच्छेद 42 के अनुसार प्रत्येक अनुसूचित व्यापारिक बैंक को रिज़र्व बैंक के पास नगद आरक्षित अनुपात (CRR) के रूप में एक न्यूनतम नगदी बेलेंस रखना होगा।

नगदी व जमारूपी धन के महत्व को समझने के लिए, देश में 31 मार्च 2019 के दिन धन के भण्डार पर एक नज़र डालिए:

लोगों के पास मुद्रा - सिक्के व नोट	20,52,209 करोड़ रुपए
बैंकों में लोगों के माँग-जमा - बचत व चालू खाते	16,26,512 करोड़ रुपए
लोगों के सावधि जमा (जिन्हें ज़रूरत पड़ने पर आसानी-से माँग-जमा में परिवर्तित किया जा सकता है)	1,17,21,603 करोड़ रुपए

स्रोत: भारतीय रिज़र्व बैंक

यह राशि रिज़र्व बैंक द्वारा समय-समय पर निर्धारित की जाती है।'

नए किस्म के धन के रूप में ये बैंक-जमा सबके लिए अत्यन्त सुविधाजनक हैं। लोग इन खातों के ज़रिए धन की प्राप्ति और भुगतान कर सकते हैं। यह चेक के माध्यम से या इलेक्ट्रॉनिक हस्तान्तरण के ज़रिए किया जा सकता है। उन्हें नगदी इस्तेमाल करने की ज़रूरत नहीं होती। बैंकिंग प्रणाली यह सुनिश्चित करती है कि एक बैंक खाते से दूसरे को धन का हस्तान्तरण सुरक्षित व निश्चित ढंग से हो। बैंक इन चीज़ों का रिकॉर्ड रखते हैं और आपस में हिसाब-किताब कर लेते हैं। इस सारे काम की निगरानी रिज़र्व बैंक करता है। बैंक-जमा रूपी धन अर्थ व्यवस्था में धन का प्रमुख रूप है। इनके बगैर करोड़ों लेन-देन सम्भव नहीं होंगे।

बैंक सचमुच खास हैं। उन्होंने एक नए किस्म का धन निर्मित किया है जिसके रिकॉर्ड हमें पासबुक में नज़र आते हैं। यहाँ कोई भी भौतिक वस्तु नहीं है। ये सिर्फ संख्याएँ हैं, जिनका हिसाब-किताब ईमानदारी से रखे जाने की अपेक्षा होती है। हम सबको भरोसा है कि भुगतान और प्राप्तियों का सही रिकॉर्ड रखा जाएगा। इसीलिए बैंकों के पास हस्ताक्षर, पासवर्ड, खाता संख्या वगैरह की जाँच की विस्तृत व्यवस्थाएँ हैं ताकि हमें यकीन हो सके कि पूरा तंत्र विश्वसनीय है और हमारा पैसा सुरक्षित है। रिज़र्व बैंक को नियम निर्धारित करने होते हैं और प्रणाली की निगरानी करनी होती है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि लोग अपने जमा-खातों का उपयोग आसानी-से नगदी के रूप में कर सकें।

इसके साथ ही करोड़ों अन्य लेन-देन के लिए मुद्रा (सिक्कों और नोटों) की ज़रूरत होती है। देश की आबादी और शहरी व ग्रामीण इलाकों में एक

चित्र-1: *बैंक शाखाओं को नगदी पहुँचाने वाला वाहन।*

विशाल अनौपचारिक क्षेत्र, जो लेन-देन के लिए नगदी का उपयोग करता है, के चलते भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा मुद्रा-उत्पादक है। दूर-दराज के ग्रामीण इलाकों में रहने वालों के लिए बहुत कम बैंक शाखाएँ हैं।

रिज़र्व बैंक को नए नोटों और सिक्कों के मुद्रण की व्यवस्था करनी होती है, और यह सुनिश्चित करना होता है कि ये ज़रूरत के अनुसार बैंक शाखाओं तक पहुँच जाएँ, कोई अभाव न रहे। उसे यह भी देखना होता है कि फटे-पुराने नोटों की प्रतिपूर्ति हो तथा नकली नोट चलन में न रहें। यह सब उसकी विस्तृत मुद्रा प्रबन्धन प्रणाली का हिस्सा है। नेपथ्य में चल रहा यह प्रबन्धन ही नगदी में हमारे अनसोचे विश्वास को बनाए रखता है।

बैंक धन का निर्माण करते हैं

लोगों से जो पैसा बैंक जमा करता है, वह उसका करता क्या है? वह उसे ज़रूरतमन्द लोगों को उधार दे सकता है और ब्याज कमा सकता है। कर्ज़ पर ब्याज के रूप में इस कमाई के दम पर ही बैंक अपना कारोबार कर पाता है और जमाकर्ताओं को भी थोड़ा ब्याज दे पाता है।

एक तंत्र के रूप में बैंक के पास एक और शक्ति होती है जो अनोखी है। वह धन का निर्माण कर सकता है, लगभग शून्य में से। एक सरलीकृत चित्र देखने के लिए पहले के उदाहरण को थोड़ा विस्तार देते हैं। आपने बैंक में 1 लाख रुपए जमा किए हैं और बैंक ने आपके नाम एक खाता बना दिया है। आप इस खाते का उपयोग चेक अथवा इलेक्ट्रॉनिक तरीके से धन आहरित करने के लिए या लेन-देन के लिए कर सकते हैं। मान लीजिए एक अन्य व्यक्ति बैंक में आती है जिसके पास वस्त्रों की एक नई दुकान के लिए माल खरीदने का एक व्यापारिक प्रस्ताव है। उसे 5 लाख रुपए के कर्ज़ की ज़रूरत है। बैंक को यह व्यापार योजना ठीक-ठाक लगती है कि नई दुकान चल जाएगी और पैसा कमाएगी। बैंक चाहेगा कि उसे कर्ज़ दे और थोड़ा ब्याज कमाए। वह क्या करेगा? उसके पास नगदी तो 1 लाख ही है। वह धन का निर्माण करेगा। वह कर्ज़दार के नाम पर एक नया खाता खोलता है और उसके खाते में 5 लाख जमा के रूप में दर्शाता है। यह पैसा बैंक ने निर्मित करके उसे उधार दिया है। वह इसका उपयोग ठीक वैसे ही कर सकती है, जैसे आप अपने जमा-खाते का करते हैं। वह अपनी दुकान के लिए माल खरीदती है और इस खाते के ज़रिए भुगतान करती है। कभी-कभार वह विविध खर्चों के लिए भी पैसा निकालती है। जब दुकान चलने लगती है, तो वह अपनी कमाई को इस खाते में जमा करती है। महीने के अन्त में बैंक उससे 5 लाख रुपए पर

ब्याज वसूल करता है और इसका भुगतान इसी खाते से किया जाता है। एक निश्चित अवधि के बाद वह कर्ज़ की पूरी राशि अदा कर देती है।

एक बार फिर, सारा काम भरोसे पर होता है। बैंक भरोसा करता है कि कर्ज़दार नई दुकान को चलाने का प्रयास करेगी और खुद के लिए पैसा कमाएगी और ब्याज समेत कर्ज़ अदा कर देगी। यह ज़रूर है कि बैंक उसके मकान के कागज़ात जैसी कोई जमानत अपने पास रख लेता है, खुदा न ख्वास्ता कुछ गड़बड़ हो जाए तो। लेकिन वह मूलत: इस भरोसे पर चलता है कि कर्ज़ की व्यवस्था दोनों के लिए लाभदायक होगी। यही अमूर्त भरोसा है, जिसे बनाए रखा जाए तो तंत्र काम कर पाता है।

क्या इस बात की कोई सीमा है कि बैंक नए जमा खाते खोल-खोलकर कितना धन उधार दे सकता है? इस बात को एक सरलीकृत उदाहरण से समझते हैं। यह कर्ज़ देने के बाद बैंक की स्थिति निम्नानुसार है:

देनदारियाँ (जो चुकाना है)	परिसम्पत्ति (जो उसके स्वामित्व में है)
जनता का जमा 6,00,000	कर्ज़ 5,00,000
	नगदी 1,00,000

वास्तव में, बैंक के पास अपनी कुल जमा राशि का 15-20 प्रतिशत अपने पास नगदी रूप में या रिज़र्व बैंक के पास नगदी रूप में या रिज़र्व बैंक द्वारा अनुमोदित सिक्यूरिटीज़ के रूप में होना चाहिए। यह सब यह सुनिश्चित करने के लिए है कि बैंकिंग व्यवस्था के सुचारु संचालन के लिए नगदी तत्काल उपलब्ध रहे और भरोसा बरकरार रहे। ये नियम रिज़र्व बैंक द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। उपरोक्त उदाहरण में आधारभूत नगदी एक लाख होने पर यही सर्वाधिक राशि है जो वह कर्ज़ के रूप में दे सकता है।

किसी बैंक के कामकाज के लिए ज़रूरी है कि दोनों पक्षों का भरोसा बना रहे। जमाकर्ताओं का भरोसा रहना चाहिए कि उनका पैसा सुरक्षित है और माँगने पर नगदी के रूप में मिल जाएगा और इस खाते के माध्यम से वे भुगतान और प्राप्तियाँ कर सकते हैं।

उधार लेने वालों के मामले में बैंक को भरोसा रखना होगा कि वे अपना कर्ज़ ब्याज सहित अदा कर देंगे। यह बैंक के लिए कमाई का साधन है, जिसके बल पर बैंक चलता है।

यह रिज़र्व बैंक की ज़िम्मेदारी है कि नियम निर्धारित करे और साथ ही निगरानी करे, अधीक्षण करे, निर्देश दे और ज़रूरी होने पर कार्रवाई करे। इसी वजह से इसे देश का केन्द्रीय बैंक कहा जाता है। यह सारे बैंकों के ऊपर एक छतरी जैसा है जो उनकी रक्षा भी करता है और मार्गदर्शन भी। जब यह

ठीक से काम करता है तो तंत्र में लोगों का भरोसा बना रहता है। जब कोई बैंक गड़बड़ी करता है या रिज़र्व बैंक प्रभावशाली नहीं होता, तब इस अमूर्त भरोसे में दरारें पड़ने लगती हैं।

अविश्वास छूत की तरह होता है

एक ओर, बैंक के पास माँग-जमा के रूप में धन के सृजन का और लोगों को नगदी के बगैर लेन-देन करने का एक नया तरीका उपलब्ध कराने की ताकत है, तो दूसरी तरफ वह छूत का शिकार भी हो सकता है। यदि लोग किसी बैंक पर अविश्वास करते हैं, तो भरोसा टूटने की यह बात तंत्र के अन्य बैंकों में भी फैलने की क्षमता रखती है। इस मामले में अफवाहें बहुत शक्तिशाली होती हैं। चाहे वे सही न हों, लेकिन उनमें बैंकों को ज़मींदोज़ करने की ताकत होती है। यस बैंक संकट के बाद फैले जज़्बातों और सन्देशों पर गौर कीजिए।

“व्हॉट्सऐप पर निराधार व तथ्यात्मक रूप से गलत सन्देश प्रसारित किए जा रहे हैं। हम आपको यकीन दिलाते हैं कि कोटक महिन्द्रा बैंक वित्तीय रूप से सुदृढ़ है।”

“महाराष्ट्र सरकार ने मामले को यह घोषणा करके बिगाड़ दिया है कि राज्य सरकार के सारे खातों को निजी बैंकों से हटाकर सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में लाया जाएगा।”

“करूर वैश्य बैंक (KVB) अपने 104 साल के पूरे इतिहास में लगातार लाभदायक रहा है। KVB बुनियादी रूप से एक सशक्त संस्थान है।”

एक निजी बैंक RBL ने कहा था, “संस्था की वित्तीय हालत और अस्थिरता की अफवाहें, खास तौर से सोशल मीडिया पर, अनुपयुक्त और स्वार्थ से प्रेरित हैं तथा तथ्यों पर आधारित नहीं हैं।”

(टाइम्स ऑफ इंडिया, मार्च 2020 की एक रिपोर्ट से)

ऐसी अफवाहें फैलती क्यों हैं? इसका कारण यह है कि लोगों को पता नहीं होता कि किस पर भरोसा करें - बैंक पर या उस फैलते सन्देश पर? सन्देश सही हुआ तो? मैं क्यों जोखिम मोल लूँ? लोगों को पता नहीं था कि एक दिन पंजाब एंड महाराष्ट्र कोऑपरेटिव बैंक डूब जाएगा और कई लोग अपना पैसा गँवा देंगे। अब वे सभी सोच रहे होंगे कि हमें भी अपना पैसा निकाल लेना चाहिए था। डूबने से पहले वह किसी भी अन्य बैंक जैसा ही था। दरअसल, उसकी सेवाएँ बढ़िया और शिष्टाचार पूर्ण थीं। लोग सोच रहे हैं कि हमने अपना पैसा रिज़र्व बैंक की घटिया निगरानी की वजह से गँवाया है।

भरोसा टूट गया है। इस सन्दर्भ में जमाकर्ताओं के विरोध प्रदर्शनों की तस्वीरें देखिए। कुछ तो जान से हाथ धो बैठे। सरकार जिस बात को नहीं समझती है, वह यह है कि एक अमूर्त

चित्र-2: पीएमसी का विरोध करते जमाकर्ता।

चीज़ के रूप में भरोसा बहुत तेज़ी-से काफूर हो जाता है और अविश्वास छूत की तरह फैल सकता है। एक कहावत है: "भरोसा दूध की तरह होता है, फट गया तो बहाल नहीं किया जा सकता।"

यह याद रखना बेहतर होगा कि दुनिया भर में केन्द्रीय बैंकों का गठन बैंकों का निरीक्षण करने और गड़बड़ियों की रोकथाम के लिए किया गया है। 1907 की भगदड़ के दौरान यू.एस.ए. में कुछ बैंक ताश के पत्तों के किलों की तरह ढह रहे थे। कुछ अन्य बैंकर्स ने एक समूह बनाया और पैसा उधार देने के लिए आगे आए। तब बैंक अचानक धन आहरण की माँग के सामने टिक पाए। जब लोगों ने देखा कि आहरण का सम्मान किया जा रहा है, तो भगदड़ रुक गई। इस अनुभव ने केन्द्रीय बैंक की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। 1913 में यू.एस.ए. में फेडरल बैंक तथा 1935 में भारत में रिज़र्व बैंक की स्थापना हुई थी।

किसी बैंक की महत्वपूर्ण जानकारी तक पहुँच सिर्फ रिज़र्व बैंक को होती है और उसकी ज़िम्मेदारी है कि वह बैंक की ऋण सम्बन्धी गतिविधियों पर निगाह रखे। कर्ज़ ठीक-ठाक सीमा में रहना चाहिए ताकि जमाकर्ता अपने पैसे को सुरक्षित समझें। जब कर्ज़दार कर्ज़ का भुगतान करते हैं, तो बैंक की कमाई होती है और वह सामान्य ढंग से काम करता है। समस्या तब शुरू होती है जब लिए गए कर्ज़ लौटाए नहीं जाते।

कर्ज़ डूबते क्यों हैं?

बैंकों की दृष्टि से कर्ज़ कई कारणों से डूब सकते हैं। हो सकता है यह ऐसी परिस्थितियों के कारण हुआ हो जो कर्ज़दार उद्यमी के नियंत्रण के

बाहर हों। लोग अपने कारोबार को सफल बनाने के लिए कड़ी मेहनत करते हैं लेकिन बाज़ार के जोखिम होते हैं जिनकी भविष्यवाणी नहीं की जा सकती।

इसके अलावा, यह भी हो सकता है कि बैंक लालची हो जाए और ज़्यादा ब्याज कमाने के चक्कर में ऐसी परियोजनाओं का वित्तपोषण करने लगे जिनमें ज़्यादा जोखिम है। दूसरे शब्दों में, वे कर्ज़ देने के मामले में विवेकपूर्ण नहीं होते, जिसकी उनसे अपेक्षा की जाती है।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि बैंक अधिकारी उनको नियंत्रित करने वाले राजनैतिक या प्रबन्धन से जुड़े अधिकारियों के दबाव में होते हैं कि उन्हें कतिपय समूहों को तरजीह देना है। ये परियोजनाएँ जोखिमपूर्ण होती हैं और अक्सर ऐसे लोग इरादतन चूककर्ता (डिफॉल्टर) होते हैं। उनका कर्ज़ चुकाने का इरादा ही नहीं होता।

फिर, सीधे-सीधे धोखाधड़ी भी होती है, अधिकांशत: बैंक अधिकारियों की मिलीभगत से। उदाहरण के लिए, पीएमसी मामले में एक रिपोर्ट कहती है, "इस मामले में दर्ज एक एफआईआर के मुताबिक HDIL के प्रवर्तकों ने बैंक प्रबन्धन के साथ मिलीभगत की ताकि बैंक की भाण्डुप शाखा से कर्ज़ लिए जा सकें। बैंक अधिकारियों ने भुगतान न होने के बावजूद इन कर्ज़ों को गैर-निष्पादित परिसम्पत्तियों (non-performing assets - NPA) के रूप में वर्गीकृत नहीं किया। रिपोर्ट का अनुमान है कि समूह से बैंक का कुल कारोबार लगभग 6500 करोड़ का है यानी बैंक के सारे अग्रिमों का लगभग 73 प्रतिशत - और इस सबका ब्याज नहीं चुकाया जा रहा है।" (बिज़नेस स्टैण्डर्ड, व्हाट इज़ पीएमसी बैंक क्राइसिस, फरवरी 18, 2020)

बैंक कर्ज़ों पर रिज़र्व बैंक की निगरानी कितनी सख्त है?

यह काफी समय से पता रहा है कि देश ऐसे कर्ज़ की समस्या से जूझ रहा है जो डूबने की प्रक्रिया में हैं। बैंक की शब्दावली में इन्हें गैर-निष्पादित परिसम्पत्तियाँ यानी NPA कहा जाता है। बैंकों को यह जानकारी रिज़र्व बैंक को बतानी होती है। रिज़र्व बैंक को उनके बही-खातों की जाँच करने, निर्देश देने और यहाँ तक कि बैंक का अधिग्रहण करने तक का अधिकार है।

वर्तमान परिदृश्य में रिज़र्व बैंक अपनी भूमिका में कमज़ोर है और लगता है कि उसे संकट का पता आखरी चरण में चलता है। उदाहरण के लिए, पीएमसी बैंक के मामले में धोखाधड़ी हुई थी, और अधिकारी घटनाक्रम को रिज़र्व बैंक से छिपाने में सफल रहे थे, जबकि गड़बड़ी का सन्देह था। ऑडिटर्स से अपेक्षा होती है कि वे स्वतंत्र होंगे, लेकिन लगता

है कि उन्होंने प्रबन्धन का पक्ष लिया। इसी प्रकार से यस बैंक के मामले में एक रिपोर्ट कहती है, "पिछले तीन वर्षों से यस बैंक गलत कारणों से खबरों में रहा था - लगातार दो वर्षों (2016 और 2017) तक हिसाब-किताब की गलत जानकारी देना, बोर्ड सदस्यों और निदेशकों के इस्तीफों का सिलसिला, प्रवर्तकों के बीच आन्तरिक कलह, बढ़ते खराब कर्ज़, जानकारियाँ छिपाना, अपर्याप्त पूंजी, वित्त जुटाने में असमर्थता, कमज़ोर अनुपालन और परिसम्पत्तियों का गलत वर्गीकरण। इस पूरे दौरान, जानकारी होने के बावजूद, रिज़र्व बैंक ने हस्तक्षेप करके इस कुप्रबन्धन के लिए ज़िम्मेदार व्यक्तियों के विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं की।" (फायनेंशियल अकाउंटेबिलिटी नेटवर्क-इंडिया, मार्च 19, 2020)

जब बैंक डूबने की कगार पर था, तब रिज़र्व बैंक ने आहरण पर रोक लगाई और एक महीने के अन्दर एक नई अधिग्रहण योजना का वायदा किया। जैसा कि आपने ऊपर व्यक्त भावनाओं में देखा, लोगों का विश्वास घायल हुआ। कारण यह है कि रोकथाम के उपाय बहुत कमज़ोर या निष्प्रभावी रहे हैं। पीएमसी ने बोरिया-बिस्तर बाँध लिया है और कई जमाकर्ता आज भी अपना पैसा वापिस पाने का इन्तज़ार कर रहे हैं या उम्मीद खो चुके हैं। और हाल के वर्षों में अन्य कई सहकारी बैंक भी डूबे हैं लेकिन वे खबरों में नहीं आए।

ऐसे माहौल में बैंकिंग प्रणाली के प्रति अविश्वास के सन्देश बहुत गम्भीर रूप ले लेते हैं। हमें इतिहास से सबक लेना चाहिए कि झूठी अफवाहों ने बैंकों को तबाह किया है। कामकाज करने की उनकी क्षमता लोगों के भरोसे पर टिकी है। अविश्वास का माहौल छूत की तरह होता है। यस बैंक के मामले में रिज़र्व बैंक बीच में आया और सुनिश्चित किया कि जमा राशियाँ सुरक्षित रहें क्योंकि स्टेट बैंक ऑफ इंडिया आगे बढ़कर इस बैंक का पुनर्निर्माण करेगा। यदि वह ऐसा न करता तो पूरा वित्तीय तंत्र धराशायी होने लगता जिसकी शुरुआत निजी बैंकों से होती। ऐसी स्थिति की कल्पना कीजिए जब निजी बैंकों के सारे जमाकर्ता अपना पैसा निकाल लें और सार्वजनिक बैंकों का रुख करें, सिर्फ इसलिए कि महाराष्ट्र सरकार कहती है कि पैसा सार्वजनिक बैंकों में ही सुरक्षित है, कहीं और नहीं। यह तो सारे निजी बैंकों के लिए हड़कम्प की स्थिति होगी, चाहे उनकी वित्तीय हालत ठीक-ठाक हो। बैंक बगैर किसी गलती के तबाह हो जाएँगे। अच्छी खबर यह है कि यस बैंक ने कामकाज बहाल कर दिया है। अलबत्ता, पीएमसी के जमाकर्ता आज भी इन्तज़ार कर रहे हैं।

रिज़र्व बैंक पर सिर्फ सरकारी

नहीं, सारे बैंकों की ज़िम्मेदारी है। ये भावनाएँ संकट का सबब बन सकती हैं और इसीलिए किसी एक बैंक के टूट पड़ने की स्थिति अन्य बैंकों में छूत की तरह फैल सकती है। यह इस बात पर निर्भर है कि इस तंत्र को लेकर लोगों का एहसास विश्वास का है या अविश्वास का। बैंक जब काम करते हैं, तो वे अद्‌भुत संस्थाएँ होती हैं, लेकिन गड़बड़ी हो जाए तो वे नरक समान हो जाते हैं।

लोगों का विश्वास बहाल करने के लिए रिज़र्व बैंक और सरकार को कार्रवाई की कोई विश्वसनीय योजना के साथ आगे आना चाहिए। कार्रवाई दो स्तरों पर ज़रूरी होगी। इसके ज़रिए ठप हो गए बैंकों को बहाल करना होगा और जमाकर्ताओं को सुरक्षा प्रदान करनी होगी। बैंक में प्रत्येक जमाकर्ता को मात्र 5 लाख का बीमा मिलता है। कई लोगों की जमा राशि इससे कहीं ज़्यादा होती है। यदि योजना के तहत जमाकर्ताओं को सुरक्षा नहीं मिलती, तो बहानेबाज़ी से काम नहीं चलेगा। लोग निजी बैंक इस आधार पर छोड़कर जाने लगेंगे कि संकट के समय सरकार सिर्फ सार्वजनिक बैंकों की रक्षा करेगी। हो सकता है कि शुरुआत जिस संकट से हुई थी, हम उससे भी बड़े झमेले में फँस जाएँ। यदि आप घाव का इलाज नहीं करते, तो हो सकता है कि भुजा को ही काटना पड़े। दूसरे स्तर पर रिज़र्व बैंक को सरकार का समर्थन मिलना चाहिए कि वह गैर-निष्पादित परिसम्पत्तियों के मुद्दे को गम्भीरता से उठा सके और इरादतन चूककर्ता, बैंक व ऑडिटर्स द्वारा गलत रिपोर्टिंग के विरुद्ध कार्रवाई कर सके।

अरविंद सरदाना: सामाजिक विज्ञान समूह, *एकलव्य* से सम्बद्ध हैं। एन.सी.ई.आर.टी. एवं अन्य राज्यों की पाठ्यपुस्तकों की निर्माण प्रक्रियाओं से जुड़ाव रहा है।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: सुशील जोशी: *एकलव्य* द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

हर बाउंड वॉल्यूम में सिमटे हैं सात रंग

भौतिकी, रसायन, गणित
वनस्पति विज्ञान, प्राणि विज्ञान
इतिहास, भूगोल, राजनीति शास्त्र
बच्चों-शिक्षकों के साथ अनुभव
पुस्तक समीक्षा, पुस्तक अंश
इंटरव्यू, आत्मकथा, जीवनी
कहानी, भाषा शिक्षण, शिक्षा शास्त्र

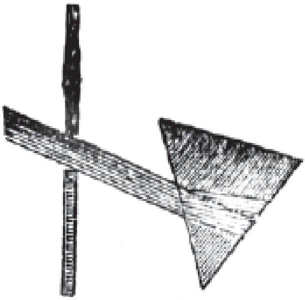

संदर्भ में अब तक प्रकाशित सामग्री 21 बाउंड वॉल्यूम में उपलब्ध है।
हरेक बाउंड वॉल्यूम का मूल्य 300 रुपए।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क कीजिए

पिटारा, एकलव्य
जमनालाल बजाज परिसर
फॉर्चून कस्तूरी के पास, जाटखेड़ी,
भोपाल, म.प्र. पिन 462026
फोन: 0755 - 2977770, 2977771
ई-मेल: pitara@eklavya.in
www.pitarakart.in

शिक्षा में कला का स्थान

नंदलाल बसु

कला शिक्षण का उद्देश्य कलाकार का निर्माण नहीं बल्कि कलाबोध और कलात्मक व्यवहार को विकसित करना है। इसके लिए अलग से कला विषय की ज़रूरत नहीं है बल्कि हर विषय के शिक्षण में, शाला की साज-सज्जा में, और दैनिक व वार्षिक गतिविधियों में कलात्मकता का पुट समाहित करना आधिक उपयोगी है। नंदलाल बसु के ये विचार आज भी उतने ही मौजू हैं जितने वे स्वतंत्रता प्राप्ति के समय थे जब भारत में नई शिक्षा की बुनियाद रखी जा रही थी। नंदलाल कला के बंगाल स्कूल के प्रवर्तक अवनीन्द्रनाथ टैगोर के शागिर्द थे और उन्होंने रवीन्द्रनाथ के आग्रह पर शान्तिनिकेतन में कला शिक्षा के लिए कलाभवन की स्थापना की थी। उन्होंने गाँधीजी के आग्रह पर काँग्रेस के अधिवेशनों को कलात्मक बनाने का ज़िम्मा लिया था और नेहरूजी के आग्रह पर नवरचित भारतीय संविधान की हस्तलिखित पाण्डुलिपि को सजाया-सँवारा था। भारतीय लोक और शास्त्रीय कलाओं पर आधारित राष्ट्रीय मगर आधुनिक भारतीय कला के सूत्रधारों में नंदलाल बसु अग्रणी थे। उनके अनुसार स्कूलों में कला शिक्षा का उद्देश्य कला के सम्बन्ध में एक पारखी नज़र विकसित करना और जीवन के हर पहलू में कलाबोध का अन्तःकरण करना है, चाहे वह टेबिल पर अपना सामान जमाना हो, या कपड़े सुखाने के लिए टाँगना हो, या उपयोगी सामान बनाना या उसका रंग-रोगन हो। स्कूल इसमें कैसे मदद कर सकता है, आईए पढ़ें।

मनुष्य ने आनन्द की प्राप्ति और ज्ञान के लिए जितने उपायों का विकास किया है, उनमें भाषा का विशेष स्थान है। साहित्य, दर्शन, विज्ञान और प्रकृति के नाना विषयों की चर्चा भाषा को माध्यम बनाकर ही की जाती है। साहित्य मनुष्य को आनन्द देता है, पर उसकी अभिव्यक्ति का क्षेत्र सीमित होता है। उसके उस अभाव की पूर्ति करती हैं ललित कलाएँ - नृत्य, संगीत एवं दूसरी कलाएँ। जैसे साहित्य की अभिव्यक्ति

की अपनी विशिष्टता है, वैसे ही नृत्य, संगीत एवं ललित कलाओं की भी। मनुष्य अपनी इन्द्रियों द्वारा, मन द्वारा बाह्यजगत की समस्त वस्तुओं का स्थूल ज्ञान एवं उनके प्रति रसानुभूति का अनुभव करता है और उसे ही कला के माध्यम से दूसरों के सामने प्रस्तुत करता है। शिक्षा के क्षेत्र में कला की चर्चा के कारण मनुष्य की अवधारणा एवं रसानुभूति, दोनों उत्कर्ष को प्राप्त करती हैं और उसे कलात्मक अभिव्यक्ति पर अधिकार प्राप्त होता है। जिस प्रकार आँख का काम कान द्वारा नहीं हो सकता, उसी प्रकार चित्रकला, संगीत या नृत्य की शिक्षा केवल लिखने-पढ़ने से नहीं हो सकती।

यदि हमारी शिक्षा का उद्‌देश्य सर्वांगीण विकास हो तो हमारे पाठ्‌यक्रम में कला का स्थान अन्यान्य पढ़ाई-लिखाई के विषयों के समान होना चाहिए। हमारे देश में विश्वविद्यालयों की ओर से अब तक जो व्यवस्था की गई है, वह नितान्त अपर्याप्त है। इसका एक कारण सम्भवतः यह है कि हमारे यहाँ अनेक लोगों की मान्यता है कि कला-साधना मात्र पेशेवर कलाकारों का काम है, साधारण आदमी को उससे कुछ लेना-देना नहीं है। बहुत-से पढ़े-लिखे लोग तक कला के सम्बन्ध में अपने अज्ञान के कारण संकोच का अनुभव नहीं करते, जन साधारण की तो बात ही छोड़िए। वे तो फोटो और चित्र का

अन्तर भी नहीं समझ पाते। वे बच्चों की जापानी गुड़िया को एक श्रेष्ठ कलाकृति मानकर उसे अवाक् देखते रहते हैं। महारद्‌दी लाल-नीले, बैंगनी रंगवाले रैपरों को देखकर उनके नेत्रों को किसी प्रकार की पीड़ा नहीं होती। सच पूछिए तो उन्हें अच्छा ही लगता

है। अधिक उपयोगिता की दुहाई देते हुए आसानी-से उपलब्ध मिट्टी की कलसी के बदले टिन का कनस्तर इस्तेमाल करते हैं।

ऊपर से देखने पर विद्या के क्षेत्र में देशवासियों की जैसी सांस्कृतिक उन्नति परिलक्षित होती है, लेकिन रसानुभूति के क्षेत्र में उनकी दीनता वैसी ही बढ़ती दिखलाई पड़ती है। वस्तुतः यह स्थिति कष्टदायक हो उठी है। इससे मुक्त होने का एक ही उपाय है - आज के शिक्षित समाज के बीच कला की शिक्षा का प्रचलन, क्योंकि यह शिक्षित समाज ही जन साधारण का आदर्श होता है।

सौन्दर्यबोध के अभाव में मनुष्य केवल रसानुभूति से वंचित रह जाता हो ऐसा नहीं, मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से भी उसकी क्षति होती है। सौन्दर्यबोध के अभाव में जो लोग घर के आंगन और कमरों में दुनिया भर का कूड़ा जमा करके रखते हैं, अपने शरीर एवं वस्त्रों की गन्दगी साफ नहीं करते, घर की दीवार पर, रास्ते में, रेल के डिब्बों में पान की पीक थूकते चलते हैं, वे केवल अपने स्वास्थ्य को ही नहीं बल्कि पूरे राष्ट्र के स्वास्थ्य को क्षति पहुँचाते हैं। जिस प्रकार उनके द्वारा समाज के शरीर में बहुत-से रोगों के कीटाणु संक्रमित होते हैं, उसी प्रकार उनके कुत्सित आचरण का कु-आदर्श भी जन साधारण में फैल जाता है।

क्या कला केवल धनी लोगों के लिए है?

हममें से कुछ लोग ऐसे हैं जो कला-साधना पर विलासी एवं धनी लोगों का एकमात्र अधिकार मानते हैं और इस प्रकार उसे अपने दैनन्दिन जीवन से कोसों दूर रखना चाहते हैं। वे भूल जाते हैं कि सौन्दर्य ही कला का प्राण है, अर्थ की तुला पर कलाकृति को नहीं तोला जा सकता। गरीब संथाल अपनी छोटी-सी मिट्टी की झोपड़ी को लीप-पोतकर साफ करके रखता है, अपनी कथरी–गुदड़ी समेटकर रखता है और कॉलेज में पढ़ने वाला एक लड़का महल जैसे सुन्दर हॉस्टल या मेस के कमरे में महँगे कपड़े-लत्ते यों ही बिखेरकर मोड़-मुसड़कर रखता है। स्पष्ट है कि गरीब संथाल का सौन्दर्यबोध उसके जीवन का अंग है, सजीव है, और धनी लड़के का सौन्दर्यबोध कपड़ों तक सीमित है, निर्जीव है। पढ़े-लिखे लोगों को कला-साधना के नाम पर कैलेण्डर में छुपे मेमसाहब के चित्र को फ्रेम में मढ़वाकर एक सचमुच के अच्छे चित्र के बगल में टाँगकर रखते हुए मैंने स्वयं देखा है। छात्रों में देखता हूँ, चित्र के फ्रेम पर कपड़ा झूल रहा है, पढ़ने की टेबल पर चाय का कप, शीशा, कंघी आदि पड़े हैं और कोको के टिन में कागज़ का फूल लगा है। साज-सज्जा में धोती पर खुले गले का कोट, साड़ी के

साथ ऊँची एड़ीवाला मेमसाहबी जूता - हर कहीं संगति और सौन्दर्य का अभाव दिखाई देता है। हमारे पास पैसे का अभाव हो या न हो, सौन्दर्यबोध का अभाव अवश्य है।

कला से पेट भरेगा क्या?

कुछ और लोग भी हैं जो कहते हैं - कला से पेट भरेगा क्या? यहाँ एक बात ध्यान में रखनी होगी। जिस प्रकार साहित्य के दो पक्ष हैं - एक आनन्द और ज्ञान का पक्ष तथा दूसरा आर्थिक पक्ष, उसी प्रकार कला के भी दो पक्ष हैं - एक जो आनन्द देता है और दूसरा जो अर्थ देता है। इनको ललित कला और शिल्प कहा जाता है। ललित कला दैनन्दिन दुख-द्वन्द्व से संकुचित हमारे मन को मुक्ति प्रदान करती है। शिल्प हमारे दैनन्दिन उपयोग में आने वाली वस्तुओं को केवल अपने जादुई स्पर्श से सुन्दर बनाकर हमारी यात्रा को सुखमय ही नहीं बनाता वरन् अर्थोपार्जन का आधार बनाता है। शिल्प की अवनति के फलस्वरूप देश की आर्थिक अवनति भी हुई है। अतः आवश्यकतानुसार कला तथा शिल्प का उपयोग न करने से देश की बहुत आर्थिक क्षति भी होती है।

कला शिक्षण की ज़रूरत और प्राथमिक उद्देश्य

कला शिक्षण के अभाव में न केवल हमारी वर्तमान जीवन-यात्रा असुन्दर हो गई है बल्कि हमारे अतीत की रस-सृष्टि द्वारा निर्मित रचनाओं की सौन्दर्य-निधि से भी हम वंचित हुए जा रहे हैं। हम लोगों की परखने की दृष्टि तैयार नहीं हो सकी। फलस्वरूप, देश में चारों ओर बिखरी चित्रकला, मूर्तिकला एवं स्थापना के सौन्दर्य को समझाने के लिए विदेशियों की आवश्यकता पड़ी। आधुनिक कला-कृतियों का भी जब तक विदेशी

बाज़ारों में मूल्यांकन नहीं हो जाता तब तक हमारे यहाँ उनका आदर नहीं होता। यह हमारे लिए लज्जा की बात है।

इनके निराकरण के लिए क्या किया जाए, इस पर विचार किया जाए। कला शिक्षा की पहली मांग है कि प्रकृति को एवं अच्छी कलात्मक वस्तुओं को श्रद्धा सहित देखा जाए, उनके निकट रहा जाए और जिन व्यक्तियों का सौन्दर्यबोध जागृत है, उनसे उस सम्बन्ध में चर्चा करके कलाकृति के सौन्दर्य को समझा जाए। विश्वविद्यालयों का यह कर्तव्य है कि अन्य विषयों के साथ-साथ वे कला विषय को भी पाठ्यक्रम में रखें, परीक्षा की दृष्टि से कला को अनिवार्य विषय मानें और विद्यार्थी प्रकृति के निकट सम्पर्क में आ सकें, इसकी व्यवस्था करें। अंकन-पद्धति की शिक्षा से विद्यार्थियों की अवलोकन शक्ति का विकास होगा और इससे साहित्य, दर्शन, विज्ञान इत्यादि विषयों के क्षेत्र में भी उन्हें सही दृष्टि प्राप्त होगी। विश्वविद्यालयों की परीक्षा पास करने से ही कोई बड़ा कवि नहीं बन जाता। उसी तरह विश्वविद्यालय में कला की शिक्षा प्राप्त करके ही हर लड़का/लड़की अच्छा कलाकार नहीं बन सकेगा। ऐसी आशा करना भूल होगी।

विद्यालयों में कला शिक्षण के लिए क्या करें?

सबसे पहले विद्यालय में, लाइब्रेरी में, पढ़ने के कमरे तथा रहने के कमरे में कुछ अच्छे चित्र एवं मूर्तियाँ तथा अन्यन्य ललित कला एवं दस्तकारी वाली कृतियाँ सजाकर रखनी होंगी। उनके अभाव में इनके अच्छे फोटो या नकल रखी जा सकती है। दूसरी बात, उपयुक्त व्यक्तियों द्वारा ऐसी अनेक पुस्तकें लिखवानी होंगी जिनमें अच्छी कलाकृतियों के चित्र हों, उनका इतिहास हो और जो लड़के/लड़कियों को सहज ही समझ में आएँ। तीसरी बात, बीच-बीच में फिल्मों के माध्यम से स्वदेश एवं विदेश की चुनी हुई अच्छी कलाकृतियों से विद्यार्थियों का साक्षात्कार कराना होगा।

चौथी बात, बीच-बीच में योग्य शिक्षकों के साथ पास के अजायब घर या आर्ट गैलरी में विद्यार्थियों को भेजना होगा ताकि वे श्रेष्ठ कृतियाँ देख सकें। स्कूलों में यदि फुटबॉल मैच देखने के लिए भेजने का इन्तज़ाम किया जा सकता है तो आर्ट गैलरी देखने के लिए क्यों नहीं? एक बात ध्यान में रखिए कि एक अच्छी कलाकृति को अपनी आँखों से देखकर एवं समझकर कला की जितनी परख विकसित होती है,

उतनी एक सौ भाषण सुनकर भी नहीं होती। अच्छे चित्र या अच्छी मूर्तियाँ यदि बचपन से बच्चे देखते रहें तो कुछ समझ में आए या न आए, उनकी दृष्टि तैयार होगी। बाद में उनमें अपने आप अच्छी-बुरी कलाकृति का विवेचन करने की शक्ति पैदा होगी और उनका सौन्दर्यबोध विकसित होगा।

पाँचवी बात, प्रकृति के निकट सम्पर्क में बच्चे आ पाएँ, इस उद्देश्य से हर ऋतु में विशेष उत्सवों का आयोजन करना होगा। इन आयोजनों में इस ऋतु-विशेष में पैदा होने वाले फल-फूलों का संग्रह करना और काव्य तथा कला के क्षेत्र में उस ऋतु से सम्बन्धित जो भी श्रेष्ठ रचनाएँ उपलब्ध हैं, उनसे जहाँ तक सम्भव हो, विद्यार्थियों को परिचित कराना उचित होगा।

छठी बात, प्रकृति में जो ऋतु उत्सव चल रहा है, उससे विद्यार्थियों को परिचित कराना। शरद ऋतु में धान के खेत और कमल से भरे तालाब (अर्थात् कमल-वन) तथा वसन्त ऋतु में पलाश और सेमल की बहार वे स्वयं अपनी आँखों से देख सकें, इसकी व्यवस्था करनी होगी। विशेषकर शहर में रहने वाले विद्यार्थियों के लिए यह व्यवस्था बहुत ज़रूरी है। गाँव के विद्यार्थियों की दृष्टि इस ओर आकर्षित करवाना पर्याप्त होगा। इन सब ऋतु उत्सवों के लिए विशेष रूप से छुट्टी देकर वनभोज की व्यवस्था करनी चाहिए। और ऋतु के उपयुक्त वेशभूषा एवं खेलकूद आदि का आयोजन करना चाहिए। प्रकृति के साथ एक बार सम्पर्क स्थापित हो जाने पर, प्रकृति से वास्तव में प्रेम हो जाने पर, विद्यार्थी के मन में रस का स्रोत कभी सूखेगा नहीं, क्योंकि प्रकृति युग-युगान्तर से कलाकार के लिए कला का आधार उपलब्ध कराती रही है।

अन्तिम बात यह है कि साल में किसी एक समय विद्यालय में एक कला महोत्सव करना होगा। उसमें हर विद्यार्थी कोई-न-कोई चीज़ अपने

हाथ से बनाकर श्रद्धा सहित लाकर रखेगा - भले ही वह कितनी भी सामान्य हो। विद्यार्थियों द्वारा बनाई गई वस्तुएँ उत्सव के प्रति अर्घ्य स्वरूप होंगी, उन्हें उसी रूप में ग्रहण करना होगा। संगीत, नृत्य जुलूस (शोभायात्रा) आदि के द्वारा उत्सव को सर्वांग सुन्दर बनाने की चेष्टा करनी होगी। उत्सव के लिए कोई निश्चित समय तय करना कठिन है, देश-भेद के अनुसार वह भिन्न-भिन्न होगा। बंगाल के लिए शरद ऋतु ही सबसे उपयुक्त लगती है।

जहाँ तक हमें पता है, हमारे देश में एकमात्र रवीन्द्रनाथ ने शिक्षा के क्षेत्र में कला-साधना को उपयुक्त स्थान दिया था। विश्वविद्यालयों में प्रचलित वर्तमान शिक्षा पद्धति के फलस्वरूप उन्हें भी कदम-कदम पर बाधाओं का सामना करना पड़ा था। विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में कला का प्रशिक्षण शामिल न होने के कारण अभिभावकगण इसे सर्वथा अप्रयोजनीय मानते हैं। फलस्वरूप, जिन बच्चों में बचपन में बहुत-सी कलाओं के प्रति अनुराग दिखाई पड़ता है, वे भी प्रवेशिका परीक्षा के साल के दो साल पहले से कला की अप्रयोजनीयता के प्रति सजग हो उठते हैं और उनका कला प्रेम इस समय से कम होते-होते अन्त में एकदम समाप्त हो जाता है। समय आ गया है, इस ओर हमारे सर्वविद्या एवं ज्ञान-चर्चा के केन्द्र विश्वविद्यालय विशेष ध्यान दें।

सीधी-सी बात है, कला के सम्बन्ध में शिक्षित समाज एवं विश्वविद्यालय की उदासीनता कम होने से ही कला चर्चा का प्रसार होगा और उसके फलस्वरूप देशवासियों का सौन्दर्यबोध तथा उनकी पर्यवेक्षण शक्ति बढ़ेगी, इसमें कोई सन्देह नहीं।

नंदलाल बसु (1882-1966): आधुनिक भारतीय कला के प्रवर्तकों में से एक और प्रासंगिक आधुनिकतावाद के प्रतिष्ठित व्यक्ति। वे अपनी भारतीय पद्धति की चित्रकारी के लिए जाने जाते थे। वे 1922 में कला भवन, शान्तिनिकेतन के अध्यक्ष भी बने।

सम्पादकीय सहयोग: सी.एन. सुब्रह्मण्यम।

सभी चित्र: नंदलाल बसु। संविधान सभा ने भारतीय संविधान के प्रथम संस्करण के चित्र बनाने के लिए नंदलाल बसु से आग्रह किया था। नंदलाल बसु ने इसके लिए कलाकारों की एक टीम बनाई और इस काम को अंजाम दिया। इन्होंने स्कूली बच्चों के लिए विश्वभारती (शान्तिनिकेतन) द्वारा प्रकाशित भाषा शिक्षण की प्रारम्भिक पुस्तकों (सहज पाठ) के लिए भी चित्र बनाए थे।

कहानी

आदम, एक दोपहर

इतालो कैल्विनो

नए माली के लड़के के बाल लम्बे थे जिन्हें वह अपने सिर के इर्द-गिर्द कपड़े की एक पट्टी से हल्के-से कमानीदार गाँठ के साथ बाँधे रखता था। वह एक हाथ में पानी से ऊपर तक भरा हज़ारा थामे और उसके वज़न का सन्तुलन बनाए रखने दूसरे हाथ को ताने हुए क्यारी की बगल के रास्ते पर चला जा रहा था। वह नस्टर्शियम के पौधों में कुछ इस तरह धीरे-धीरे, सावधानी के साथ पानी डालता जा रहा था मानो कॉफी और दूध उँडेल रहा हो, और वह यह तब तक करता रहता जब तक कि हर पौधे के तल की ज़मीन नरम मुलायम धब्बे में नहीं बदल जाती थी; जब वह धब्बा बड़ा और पर्याप्त गीला हो जाता, तो वह हज़ारा उठाता और अगले पौधे की ओर बढ़ जाता। मारिया-नुन्ज़िआता उसे रसोई की खिड़की से देख रही थी, और सोच रही थी कि बागवानी का काम कितना अच्छा और शान्तिपूर्ण होता है। उसने देखा कि वह अब जवान हो गया था, लेकिन वह अभी भी हाफ पैण्ट पहनता था और उन लम्बे बालों की वजह से वह लड़की जैसा दिखता था। वह बर्तन माँजना बन्द कर खिड़की को थपथपाने लगी।

"ए, लड़के," उसने आवाज़ लगाई।

माली के लड़के ने सिर उठाया, मारिया-नुन्ज़िआता को देखा और मुस्करा दिया। जवाब में वह हँसी, कुछ हद तक इसलिए कि उसने ऐसे लम्बे बालों वाले और सिर पर इस तरह की कमानी वाले लड़के को पहले कभी नहीं देखा था। माली के लड़के ने उसको हाथ हिलाकर बुलाया, और मारिया नुन्ज़िआता उसके इस कौतुकपूर्ण इशारे पर हँसती चली गई, और फिर उसने खुद हाथ से इशारा करके उसको बताया कि मुझे बर्तन माँजने हैं। लेकिन लड़के ने फिर से उसे बुलाने हाथ हिलाया, और दूसरे हाथ से डहलिया के गमलों की ओर इशारा किया। वह उन डहलियाओं की ओर क्यों इशारा कर रहा है? मारिया-नुन्ज़िआता ने खिड़की खोली और अपना हाथ बाहर निकाला।

"क्या है?" उसने पूछा, और वह फिर से हँसने लगी।

"तुम एक मज़ेदार चीज़ देखना चाहती हो?"

"क्या है?"

"एक मज़ेदार चीज़। आओ और देखो। फुर्ती-से।"

"बताओ तो क्या है।"

"मैं वह तुम्हें दूँगा। मैं तुम्हें एक बहुत ही मज़ेदार चीज़ दूँगा।"

"लेकिन मुझे बर्तन माँजने हैं, और मेम साब आ जाएँगी और मुझे नदारद पाएँगी।"

"तुम्हें यह चाहिए या नहीं चाहिए? अब आ भी जाओ।"

"एक सेकण्ड रुको," मारिया नुन्ज़िआता ने कहा, और खिड़की बन्द कर दी।

जब वह रसोई के दरवाज़े से बाहर निकली, तो माली का लड़का अभी भी अपनी जगह पर था और नस्टर्शियम के पौधों को पानी दे रहा था।

"हैलो," मारिया-नुन्ज़िआता ने कहा।

मरिया-नुन्ज़ियाता अपने कद से लम्बी लग रही थी क्योंकि उसने ऊँची एड़ी के जूते पहन रखे थे, जिनको पहनकर काम करना दयनीय था, लेकिन उसे उनको पहनना बहुत अच्छा लगता था। उसके काले घुँघराले बालों के झुण्ड के बीच उसका छोटा-सा चेहरा किसी बच्चे के चेहरे जैसा लगता था, लेकिन उसके एप्रन की सलवटों के तले उसकी काया भरी-पूरी और पकी हुई थी। वह हमेशा हँसती रहती थी: या तो दूसरों की बातों पर या अपनी ही बातों पर।

"हैलो," माली के लड़के ने कहा। उसके चेहरे, गर्दन और छाती की चमड़ी गहरे गेहुआँ रंग की थी; शायद इसलिए कि उसका आधा हिस्सा हमेशा नंगा रहता था, जैसेकि अभी था।

"तुम्हारा नाम क्या है?" मारिया नुन्ज़िआता ने पूछा।

"लिबिरेज़ो," माली के लड़के ने कहा।

मारिया-नुन्ज़िआता हँस पड़ी और दोहराने लगी: "लिबिरेज़ो... लिबिरेज़ो...क्या ही मज़ेदार नाम है, लिबिरेज़ो।"

"यह नाम एस्पिरान्तो में है," उसने कहा। "एस्पिरान्तो में इसका मतलब होता है 'आज़ादी'।"

"एस्पिरान्तो," मारिया-नुन्ज़ियाता ने कहा। "क्या तुम एस्पिरान्तो हो?"

"एस्पिरान्तो एक भाषा है," लिबिरेज़ो ने समझाया। "मेरे पिता एस्पिरान्तो बोलते हैं।"

"मैं कैलेब्रियाई हूँ," मारिया-नुन्ज़िआता ने ज़ोर-से कहा।

"तुम्हारा नाम क्या है?"

"मारिया-नुन्ज़िआता," उसने कहा और हँस पड़ी।

"तुम हमेशा हँसती क्यों रहती हो?"

"तुम एस्पिरान्तो क्यों कहलाते हो?"

"एस्पिरान्तो नहीं, लिबिरेज़ो।"

"क्यों?"

"तुम मारिया-नुन्ज़िआता क्यों कहलाती हो?"

"ये मैडोना का नाम है। मेरा नाम मैडोना के नाम पर है और मेरे भाई का नाम सेण्ट जोज़ेफ के नाम पर है।"

"सेन्जोज़ेफ?"

मारिया-नुन्ज़िआता ठहाका मारकर हँस पड़ी: "सेन्जोज़ेफ! सेन्जोज़ेफ नहीं, लिबिरेज़ो, सेण्ट जोज़ेफ!"

"मेरे भाई का नाम 'जर्मिनल' है," लिबिरेज़ो ने कहा, "और मेरी बहन का नाम 'ओम्निआ' है।"

"ये तुमने अच्छी बात कही," मारिया-नुन्ज़िआता ने कहा, "दिखाओ मुझे वह क्या है।"

"तो, आओ," लिबिरेज़ो ने कहा। उसने हज़ारा नीचे रख दिया और उसका हाथ थाम लिया।

मारिया-नुन्ज़िआता हिचकिचायी। "पहले मुझे बताओ कि वह है क्या।"

"तुम खुद देखोगी," उसने कहा, "लेकिन तुम्हें वादा करना होगा कि तुम उसका खयाल रखोगी।"

"तुम वह मुझे दे दोगो?"

"हाँ, मैं वह तुम्हें दे दूँगा।" वह उसे बगीचे की दीवार के एक कोने तक ले जा चुका था। वहाँ गमलों में उगे हुए डहलिया उनके जितने ही लम्बे थे।

"वह रहा।"

"क्या है?"

"रुको।"

मारिया-नुन्ज़िआता उसके कन्धों के ऊपर से झाँकने लगी। लिबिरेज़ो एक गमले को हटाने के लिए झुका, फिर उसने दीवार के पास का एक और गमला उठाया, और ज़मीन की ओर इशारा किया।

"ये रहा," उसने कहा।

"ये क्या है?" मारिया-नुन्ज़िआता ने पूछा। उसे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था; कोना छाया में डूबा हुआ था, गीली पत्तियों और बाग की फफूँद से भरा हुआ।

"देखो, वह चल रहा है," लड़के ने कहा। फिर लड़की को कोई चीज़ दिखाई दी जो रेंगते हुए पत्थर या पत्ती जैसी लगती थी, कोई गीली-सी चीज़, जिसकी आँखें थीं और पैर थे; एक मेंढक।

"उई माँ!"

मारिया-नुन्ज़िआता ऊँची ऐड़ी के अपने जूतों के बल दबे-पाँव दहलियाओं के बीच चलने लगी। लिबिरेज़ो उस मेंढक के पास उकड़ूँ बैठ गया और अपने गेहुँआँ चेहरे के बीच अपने सफेद दाँत दिखाते हुए हँसने लगा।

"तुम्हें डर लग रहा है? ये महज़ एक मेंढक है! तुम डर क्यों रही हो?"

"मेंढक!" मारिया-नुन्ज़िआता ने गहरी साँस ली।

"बेशक यह मेंढक है। यहाँ आओ," लिबिरेज़ो ने कहा।

उसने काँपती अँगुली से उसकी ओर इशारा किया। "इसे मार दो।"

उसने अपने हाथ आगे कर दिए, मानो वह उसको बचाना चाहता हो। "मैं मारना नहीं चाहता। यह बहुत भला है।"

"भला मेंढक?"

"सारे मेंढक भले होते हैं। वे केंचुए खाते हैं।"

"ओह!" मारिया-नुन्ज़िआता ने कहा, लेकिन वह उसके करीब नहीं गई। वह अपने एप्रन का कोना चबा रही थी और कनखियों से देखने की कोशिश कर रही थी।

"देखो, यह कितना प्यारा है," लिबिरेज़ो ने कहा और उस पर अपना हाथ रख दिया।

मारिया-नुन्ज़िआता, जो अब हँस नहीं रही थी, उसके पास पहुँची और मुँह बाये देखने लगी। "नहीं! नहीं! उसे छुओ मत!"

लिबिरेज़ो अपनी एक अँगुली से मेंढक की घूसर-हरी पीठ थपथपा रहा था, जो छोटी-छोटी चिपचिपी गाँठों से ढँकी हुई थी।

"क्या तुम पागल हो? तुम जानते नहीं कि उनको छूने से वे तपने लगते हैं, और हाथों में सूजन पैदा कर देते हैं?"

लड़के ने उसे अपने बड़े गेहुआँ हाथ दिखाए, उसकी हथेलियाँ पीले रंग के भट्टों से भरी हुई थीं।

"ओह, यह मुझे नुकसान नहीं पहुँचाएगा," उसने कहा, "और यह बहुत प्यारा है।"

अब उसने मेंढक की गर्दन पकड़कर उसको बिल्ली की तरह उठाकर अपनी हथेली पर रख लिया। मारिया-नुन्ज़िआता, जो अब भी अपने

एप्रन का कोना चबाये जा रही थी, करीब आई और उसके बगल में उकड़ूँ बैठ गई।

"उई माँ!" वह आश्चर्य से बोली।

वे दोनों दहलियाओं के पीछे उकड़ूँ बैठे हुए थे, और मारिया-नुन्ज़िआता के गुलाबी घुटने लिबिरेज़ो के गेहुआँ, रगड़ खाए घुटनों को छू रहे थे। लिबिरेज़ो ने अपनी दूसरी हथेली को कप की शक्ल देकर मेंढक की पीठ पर रख दिया, और जैसे ही वह फिसलने लगता वैसे ही उसको उस हथेली से पकड़ लेता।

"तुम इसे थपथपाओ, मारिया-नुन्ज़िआता," उसने कहा।

लड़की ने अपने हाथ अपने एप्रन में छिपा लिए।

"नहीं," वह सख्त स्वर में बोली।

"क्या?" लड़के ने कहा। "तुम्हें यह नहीं चाहिए?"

मारिया-नुन्ज़िआता ने अपनी आँखें झुकाईं, मेंढक की ओर नज़र डाली, और उनको फिर से झुका लिया।

"नहीं," उसने कहा।

"लेकिन ये तुम्हारा है। मैं ये तुम्हें दे रहा हूँ," लिबिरेज़ो ने कहा।

मारिया-नुन्ज़िआता की आँखों में उदासी छा गई। किसी तोहफे से इन्कार करना दुख की बात थी, उसे कभी किसी ने कोई तोहफा नहीं दिया था, लेकिन यह मेंढक वाकई उसे विकर्षित कर रहा था।

"तुम चाहो तो इसे अपने घर ले जा सकती हो, यह तुम्हारा साथी होगा।"

"नहीं," उसने कहा।

लिबिरेज़ो ने मेंढक को वापस ज़मीन पर रख दिया और वह फुर्ती-से उछलकर पत्तियों के नीचे जा छिपा।

"गुड-बाय, लिबिरेज़ो।"

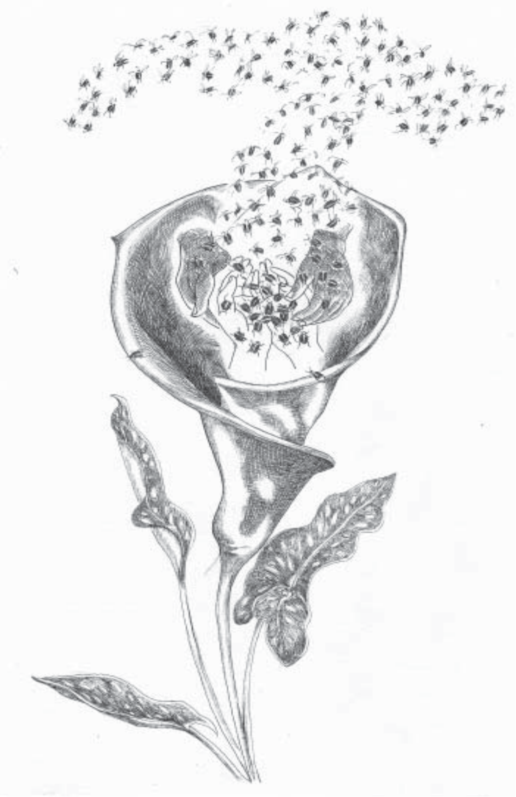

"एक मिनिट रुको।"

"लेकिन मुझे जाना होगा और बर्तनों की सफाई पूरी करनी होगी। मेम साब को मेरा बगीचे में आना पसन्द नहीं है।"

"रुको। मैं तुम्हें कुछ देना चाहता हूँ। एक वाकई अच्छी चीज़। मेरे साथ आओ।"

वह बजरी के रास्ते पर उसके पीछे चल पड़ी। क्या ही अजीब लड़का है यह लिबिरेज़ो, इतने लम्बे बालों वाला और अपने हाथों से मेंढक को पकड़ लेने वाला।

"तुम्हारी क्या उम्र है, लिबिरेज़ो?"

"पन्द्रह। और तुम्हारी?"

"चौदह।"

"अभी, या तुम्हारे अगले जन्मदिन पर?"

"मेरे अगले जन्मदिन पर। अज़म्प्शन डे।"

"वह क्या अब बीत चुका है?"

"क्या, क्या तुम्हें नहीं मालूम कि अज़म्प्शन डे क्या होता है?" वह हँसने लगी।

"नहीं।"

"अज़म्प्शन डे, जब जुलूस निकलता है। क्या तुम उस जुलूस में नहीं जाते?"

"मैं? नहीं।"

"हमारे गाँव में तो सुन्दर जुलूस निकलते हैं। यहाँ वैसा नहीं है, हमारे यहाँ जैसा।" वहाँ बड़े-बड़े खेत हैं बर्गामोट से भरे हुए, बर्गामोट ही बर्गामोट, और हर कोई सुबह से रात तक बर्गामोट ही तोड़ता रहता है। मेरे चौदह भाई-बहन हैं और वे सब बर्गामोट ही तोड़ते हैं; पाँच तो तभी मर गए थे जब वे बहुत छोटे थे, और फिर मेरी माँ को टिटनेस हो गया था, और हम लोगों ने अंकल कार्मेलो के यहाँ जाने के लिए एक हफ्ता ट्रेन में गुज़ारा था, और हम सभी आठों लोग वहाँ गैरेज में सोए थे। ये बताओ कि तुम्हारे बाल इतने लम्बे क्यों हैं?"

वे रुक गये थे।

"क्योंकि वे इसी तरह बढ़ते हैं। तुम्हारे बाल भी तो लम्बे हैं।"

"मैं लड़की हूँ। अगर तुम लम्बे बाल रखते हो, तो तुम लड़की जैसे हो।"

"मैं लड़की जैसा नहीं हूँ। लड़के और लड़की का फर्क बालों से नहीं पहचाना जाता।"

"बालों से नहीं?"

"नहीं, बालों से नहीं।"

"बालों से क्यों नहीं?"

"क्या तुम चाहती हो कि मैं तुम्हें कुछ अच्छी चीज़ दूँ?"

"हाँ, ज़रूर।"

लिबिरेज़ो एरम लिली के पौधों के बीच चलने लगा, जो आसमान की पृष्ठभूमि में सफेद तुरहियों की तरह खड़े थे। लिबिरेज़ो ने हरेक को दो अँगुलियों से छूकर जाँचा-परखा, और

फिर कोई चीज़ अपनी मुट्ठी में छिपा ली। मारिया-नुन्ज़िआता फूलों की क्यारियों तक नहीं गई थी, और उसे चुपचाप हँसते हुए देख रही थी। अब यह क्या करने वाला है? लिबिरेज़ो अब तक सारी लिली को जाँच चुका था। वह एक हथेली को दूसरी हथेली पर रखे हुए उसके पास आया।

"अपने हाथ खोलो," उसने कहा। मारिया-नुन्ज़िआता ने अपनी हथेलियों को चुल्लू के आकार में मोड़ा, लेकिन वह उनको उसकी हथेलियों के नीचे रखने से डर रही थी।

"तुमने वहाँ क्या छुपा रखा है?"

"एक बहुत ही अच्छी चीज़। तुम देखोगी?"

"पहले मुझे दिखाओ।"

लिबिरेज़ो ने अपनी मुट्ठी पर से हाथ हटाकर उसको खोला और उसे अन्दर देखने दिया। उसकी हथेली बहुरंगी कीड़ों से भरी हुई थी, लाल और काले और बैंगनी, लेकिन हरे रंग के कीड़े सबसे प्यारे थे। वे भनभना रहे थे और एक-दूसरे पर फिसलते हुए अपने छोटे-छोटे काले पैर हवा में लहरा रहे थे। मारिया नुन्ज़िआता ने अपने हाथ एप्रन के नीचे छुपा लिए।

"ये रहे," लिबिरेज़ो ने कहा। "क्या तुम्हें पसन्द नहीं आए?"

"हाँ," मारिया-नुन्ज़ियाता ने अनिश्चय के भाव से कहा। वह अभी भी अपने हाथ एप्रन के भीतर किए हुए थी।

"जब इनको ज़ोर-से पकड़ते हैं, तो ये गुदगुदी करते हैं; तुम महसूस करना चाहोगी?"

मारिया-नुन्ज़िआता ने सकुचाते हुए अपने हाथ बढ़ाए, और लिबिरेज़ो ने उन पर हर रंग के ढेर सारे कीड़े उँडेल दिए।

"डरना मत, वे तुम्हें काटेंगे नहीं।"

"उई माँ!" यह उसे सूझा ही नहीं था कि वे उसको काट सकते हैं। उसने अपनी हथेलियाँ खोल दीं और उन कीड़ों ने अपने पंख खोले और वे सुन्दर रंग गायब हो गए और चारों ओर उड़ते और यहाँ-वहाँ बैठते काले कीड़ों के अलावा वहाँ कुछ भी नहीं बचा।

"कितने दुख की बात है। मैंने तुम्हें एक तोहफा देने की कोशिश की और तुम हो कि उसे चाहती ही नहीं।"

"अब मुझे जाना होगा और बर्तन माँजने होंगे। अगर मैं मेम साब को घर पर नहीं मिली तो वे नाराज़ होंगी।"

"तुम तोहफा नहीं चाहतीं?"

"अब तुम मुझे क्या देने वाले हो?"

"आओ और देखो।"

उसने एकबार फिर से उसका हाथ थामा और उसे फूलों की क्यारियों के बीच से ले गया।

"लिबिरेज़ो, मुझे जल्दी ही रसोई में वापस लौटना चाहिए। अभी मुझे वहाँ एक चिकन को भी साफ करना है।"

"छी!"

"छी क्यों?"

"हम लोग मरे हुए पक्षियों या जानवरों का मांस नहीं खाते।"

"क्यों, क्या तुम लोग हर वक्त उपवास रखते हो?"

"क्या मतलब?"

"मतलब यह कि तब तुम लोग क्या खाते हो?"

"ओह, सब तरह की चीज़ें, चुकन्दर, सलाद के पत्ते, टमाटर। मेरे पिता को यह पसन्द नहीं है कि हम लोग मरे हुए जानवरों का गोश्त खाएँ। या कॉफी या शक्कर भी।"

"तब तुम लोग शक्कर के राशन का क्या करते हो?"

"उसको ब्लैक मार्केट में बेच देते हैं।"

वे कुछ लताओं के करीब पहुँच गए थे, जो लाल फूलों से लदी हुई थीं।

"कितने सुन्दर फूल हैं," मारिया-नुन्ज़िआता ने कहा। "तुम इनको कभी तोड़ते हो?"

"काहे के लिए?"

"मैडोना के पास ले जाने। फूल मैडोना के लिए बने हैं।"

"मेसेम्ब्रियेन्थेमॅम।"

"ये क्या है?"

"इस पौधे को लैटिन में मेसेम्ब्रियेन्थेमॅम कहा जाता है। सारे फलों के लैटिन नाम होते हैं।"

"मांस भी लेटिन में है?"

"इसके बारे में मैं नहीं जानता।"

लिबिरेज़ो अब दीवार की घुमावदार शाखाओं के बीच झाँक रहा था।

"वो रहा," उसने कहा।

"क्या है?"

वह काले धब्बों वाला एक हरा गिरगिट था, जो धूप का आनन्द ले रहा था।

"मैं उसे पकड़ूँगा।"

"नहीं।"

लेकिन वह गिरगिट के करीब जा पहुँचा, बहुत दबे पाँव, दोनों हाथ खोले हुए; उसने एक छलांग लगाई और उसको पकड़ लिया। वह खुश होकर, अपने सफेद दाँत दिखाता हुआ, हँसने लगा। "देखना, वह भाग रहा है!" पहले एक भौंचक सिर, फिर एक पूँछ, उसकी मुड़ी हुई अँगुलियों के बीच से बाहर फिसलने लगी। मारिया-नुन्ज़िआता भी हँस रही थी, हर बार जैसे ही वह गिरगिट को देखती, वह उछलकर पीछे हट जाती और अपने स्कर्ट को अपने घुटनों तक कसकर खींच लेती।

"मतलब यह है कि तुम वाकई नहीं चाहतीं कि मैं तुम्हें कुछ दूँ," लिबिरेज़ो ने किंचित दुखी मन से कहा, और फिर उसने बहुत सावधानी के साथ गिरगिट को वापस दीवार पर रख दिया; वह तुरन्त भाग खड़ा हुआ। मारिया-नुन्ज़िआता अपनी नज़रें झुकाए रही।

“मेरे साथ आओ,” लिबिरेज़ो ने कहा, और फिर से उसका हाथ थाम लिया।

“मैं चाहती हूँ कि मेरे पास लिपिस्टिक हो और मैं अपने होंठों को लाल रंगकर इतवार के दिनों में बाहर नाचने को जाऊँ। और इसके बाद बेनेडिक्शन पर अपने सिर पर डालने के लिए एक काला नकाब।”

“इतवारों को तो मैं अपने भाई के साथ जंगल जाता हूँ और हम दो बोरे भर चीड़ के कोन लेकर आते हैं। इसके बाद शाम को मेरे पिता ज़ोर-ज़ोर-से क्रोपोट्किन के हिस्सों का पाठ करते हैं। मेरे पिता के बाल उनके कन्धों तक आते हैं और दाढ़ी उनकी छाती तक झूलती रहती है। और वे गर्मियों में और जाड़ों में हाफ पैण्ट पहनते हैं। और मैं एनार्किस्ट

फेडरेशन विण्डोज़ के लिए ड्रॉइंग करता हूँ। टॉप हैट वाली तस्वीरें व्यापारियों की होती हैं, जो टोपियाँ पहने होते हैं वे जनरल होते हैं, और गोल टोप पहने होते हैं वे पादरी होते हैं; इसके बाद मैं उनमें वॉटर कलर भरता हूँ।"

वे चलते हुए एक पोखर तक आ गए जिसमें कमल की गोल पत्तियाँ तैर रही थीं।

"अब बिलकुल चुप रहना," लिबिरेज़ो ने आदेश दिया।

पानी के नीचे एक मेंढक को अपने हरे हाथों-पैरों के सहारे हल्के-हल्के तैरते देखा जा सकता था। वह अचानक पानी की सतह पर आया, उछला और कमल के पत्ते के बीच जाकर बैठ गया।

"वह रहा," लिबिरेज़ो ज़ोर-से बोला और उसको पकड़ने उसने अपना हाथ बढ़ाया, लेकिन मारिया-नुन्ज़िआता के मुँह से चीख निकल गई, "उह!" और मेंढक वापस पानी में उछल गया। लिबिरेज़ो उसको ढूँढ़ने लगा, उसकी नाक लगभग पानी की सतह को छू रही थी।

"वह रहा।"

उसने तेज़ी-से एक हाथ डाला और उसे बन्द मुट्ठी में निकाल लिया।

"एक साथ दो हैं," वह चिल्लाया। "देखो। वे दो हैं, एक के ऊपर एक।"

"क्यों?" मारिया-नुन्ज़िआता ने पूछा।

"नर और मादा एक-दूसरे से चिपके हुए हैं," लिबिरेज़ो ने कहा। "देखो वे क्या कर रहे हैं।" और उसने उन मेंढकों को मारिया-नुन्ज़िआता के हाथ में रखने की कोशिश की। मारिया-नुन्ज़िआता निश्चय नहीं कर पा रही थी कि वह इसलिए डरी हुई थी कि वे मेंढक थे, या इसलिए कि वे एक-दूसरे से चिपके हुए नर और मादा थे।

"उनको अकेला छोड़ दो," उसने कहा। "तुम्हें उनको नहीं छूना चाहिए।"

"नर और मादा," लिबिरेज़ो ने दोहराया। "वे मेंढक के बच्चे तैयार कर रहे हैं।" सूरज पर से एक बादल गुज़रा। सहसा मारिया-नुन्ज़िआता को बेचैनी महसूस होने लगी।

"देर हो गई है। मेम साब निश्चय ही मुझे ढूँढ़ रही होंगी।"

लेकिन वह गई नहीं। इसकी बजाय वे आसपास भटकते रहे हालाँकि, सूरज दोबारा बाहर नहीं आया था। तभी उसे (लड़के को) एक साँप मिला: वह बाँस के झुरमुट के पीछे एक बहुत छोटा-सा साँप था। लिबिरेज़ो ने उसे अपनी बाँह पर लपेट लिया और उसका सिर थपथपाया।

"एक वक्त था जब मैं साँपों को प्रशिक्षण दिया करता था। मेरे पास एक दर्जन साँप थे, उनमें से एक लम्बा और पीला था, पनियल साँप।

लेकिन उसने अपनी केंचुल उतारी और भाग गया। इसे देखो, ये कैसे अपना मुँह खोल रहा है, देखो इसकी जीभ कैसे बीच से दो-फाँक है। इसे थपथपाओ, ये काटेगा नहीं।"

लेकिन मारिया नुन्ज़िआता साँपों से भी डरती थी। इसके बाद वे चट्टानों से घिरे पोखर पर गए। पहले उसने (लड़के ने) उसे फव्वारा दिखाया, और उसके सारे सूराख खोल दिए, जिसे देखकर वह बहुत खुश हुई। फिर उसने उसे सुनहरी मछली दिखाई। वह एक अकेली बूढ़ी मछली थी, और उसकी पपड़ियाँ सफेद हो चली थीं। आखिरकार; मारिया-नुन्ज़िआता को वह सुनहरी मछली भा गई। लिबिरेज़ो उसको पकड़ने के लिए पानी के अन्दर अपने हाथ घुमाने लगा; यह बहुत मुश्किल था, लेकिन अगर वह उसको पकड़ लेता, तो मारिया-नुन्ज़िआता उसको एक कटोरे में डालकर, रसोई में रख सकती थी। उसने उसको किसी तरह पकड़ तो लिया, लेकिन यह सोचकर पानी से बाहर नहीं निकाला कि इससे उसका दम घुट सकता था।

"तुम अपने हाथ यहाँ डालो, इसे थपथपाओ," लिबिरेज़ो ने कहा। "तुम इसका साँस लेना महसूस कर सकती हो; इसके पर कागज़ जितने पतले हैं और पपड़ियाँ चुभती हैं, हालाँकि बहुत नहीं चुभतीं।"

लेकिन मारिया-नुन्ज़िआता मछली को भी नहीं थपथपाना चाहती थी। पेतूनिया की क्यारी की ज़मीन बहुत मुलायम थी, और लिबिरेज़ो ने अपनी अँगुलियों से खोदकर कुछ लम्बे, कोमल केंचुए निकाले।

लेकिन मारिया-नुन्ज़िआता हल्की-सी चीख मारती हुई वहाँ से दूर जा खड़ी हुई।

"अपना हाथ यहाँ रखो," लिबिरेज़ो ने आड़ू के एक पुराने पेड़ के तने की ओर इशारा करते हुए कहा। मारिया-नुन्ज़िआता को समझ में तो नहीं आया कि वह वैसा करने को क्यों कह रहा था, लेकिन तब भी उसने अपना हाथ वहाँ रख दिया; लेकिन फिर वह चीख़ पड़ी और पोखर में अपना वह हाथ डुबाने वहाँ से भागी; क्योंकि जब उसने वहाँ से अपना हाथ खींचा था, तो वह चींटियों से ढँका हुआ था। आड़ू के उस दरख्त पर उनका अम्बार लगा हुआ था, छोटी-छोटी काली 'अर्हेन्ताइन' चींटियाँ।

"देखो," लिबिरेज़ो ने कहा और अपना एक हाथ तने पर रख दिया। चींटियाँ साफ तौर पर उसके हाथ पर रेंग रही थीं लेकिन उसने उनको झाड़कर अलग नहीं किया।

"क्यों?" मारिया नुन्ज़िआता ने पूछा। "तुम खुद को चींटियों से क्यों ढँक रहे हो?"

उसका हाथ अब खासा काला था,

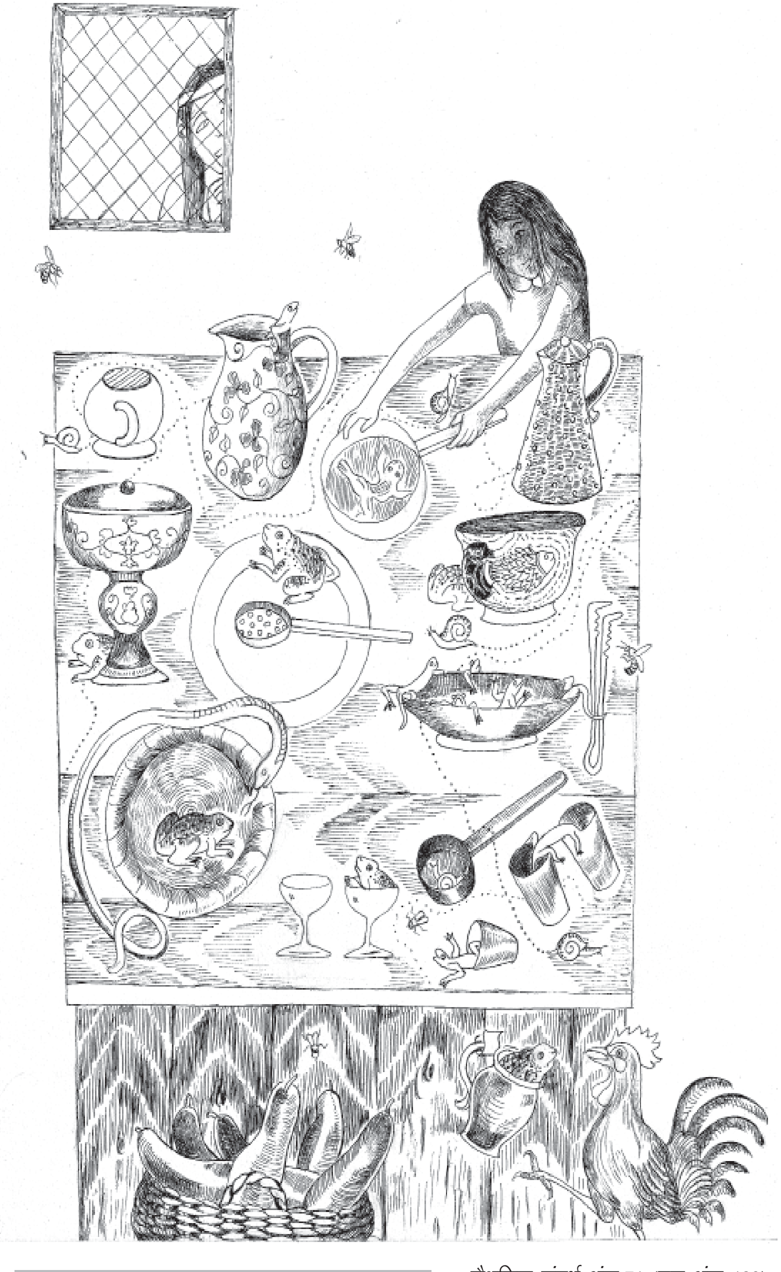

और अब वे उसकी कलाई पर रेंग रही थीं।

"अपना हाथ दूर रखो," मारिया-नुन्ज़िआता गिड़गिड़ाई। "वे तुम्हारे सारे शरीर पर चढ़ जाएँगी।"

चींटियाँ उसकी नंगी बाँह पर रेंग रही थीं, और उसकी कुहनी तक पहुँच चुकी थीं।

अब उसकी पूरी बाँह रेंगते काले बिन्दुओं की तह से ढँक चुकी थी; वे उसकी काँख तक पहुँच गईं लेकिन उसने उनको झटककर अलग नहीं किया।

"उनसे छुटकारा पाओ, लिबिरेज़ो। अपना हाथ पानी में डाल दो!"

लिबिरेज़ो हँसा, कुछ चींटियाँ तो अब उसकी गर्दन से होती हुई उसके चेहरे तक पर रेंगने लगी थीं।

"लिबिरेज़ो! तुम जो भी चाहोगे मैं करूँगी! मैं वे सारे तोहफे मंज़ूर करने को तैयार हूँ जो तुमने मुझे दिए थे।"

उसने एक झटके-से अपनी बाँहें उसके गले में डाल दीं और चींटियों को झाड़ने लगी।

लिबिरेज़ो ने अपनी गेहुँइ और सफेद हँसी हँसते हुए पेड़ से अपना हाथ हटा लिया और उदासीन भाव से अपनी बाँह को झाड़ने लगा। लेकिन साफ दिख रहा था कि वह भावविह्वल था।

"तब ठीक है, मैं तुम्हें सचमुच एक बड़ा तोहफा दूँगा, मैंने फैसला कर लिया है। वह सबसे बड़ा तोहफा जो मैं दे सकता हूँ।"

"वह क्या है?"

"एक साही।"

"उई माँ! मेम साब! मेम साब मुझे बुला रही हैं!"

***

मारिया-नुन्ज़िआता ने अभी बर्तन साफ ही किए थे कि तभी उसे खिड़की पर कंकड़ के टकराने की आवाज़ सुनाई दी। खिड़की के नीचे लिबिरेज़ो एक बड़ी टोकरी लिए खड़ा था।

"मारिया-नुन्ज़िआता, मुझे अन्दर आने दो। मैं तुम्हें एक सरप्राइज़ देना चाहता हूँ।"

"नहीं, तुम ऊपर नहीं आ सकते। वह तुम क्या लिए हो?"

लेकिन तभी मेम साब ने घण्टी बजाई, और मारिया-नुन्ज़िआता वहाँ से चली गई।

जब वह रसोई में वापस लौटी, तो लिबिरेज़ो कहीं दिखाई नहीं दिया। न रसोई के अन्दर, न खिड़की के नीचे। मारिया-नुन्ज़िआता सिंक के पास गई। और तब उसने वह सरप्राइज़ देखा।

उस हर प्लेट पर, जो उसने वहाँ सुखाने के लिए रख छोड़ी थी, एक मेंढक दुबका हुआ था; एक डेगची में एक साँप कुण्डली मारे बैठा था, सूप के एक कटोरे में गिरगिट भरे हुए थे,

सारे ग्लासों पर चिपचिपी जोंकें रंगबिरंगी लकीरें बना रहा थीं। पानी से लबालब भरे बेसिन में वह अकेली बूढ़ी सुनहरी मछली तैर रही थी।

मारिया-नुन्ज़िआता पीछे हट गई, लेकिन उसे अपने पैरों के बीच एक बड़ा मेंढक दिखाई दिया। और उसके पीछे एक कतार में पाँच छोटे-छोटे मेंढक थे, जो स्याह-सफेद टाइलों से ढँके फर्श पर धीरे उछल रहे थे।

इतालो काल्विनो (1923-1985): इतालवी पत्रकार और लघुकथा लेखक व उपन्यासकार। इनके श्रेष्ठतम कामों में अवर एंसिस्टर्स (ट्रायलॉजी), कॉस्मीकॉमिक्स (लघुकथाओं का संकलन) और इंविज़िबल सिटीज़ एवं इफ ऑन अ विन्टर्स नाइट अ ट्रेवेलर (उपन्यास) शामिल हैं।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: मदन सोनी: आलोचना के क्षेत्र में सक्रिय वरिष्ठ हिन्दी लेखक व अनुवादक। इनकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हैं। इन्होंने उम्बर्तो एको के उपन्यास *द नेम ऑफ दि रोज़*, डैन ब्राउन के उपन्यास *दि द विंची कोड* और युवाल नोह हरारी की किताब *सेपियन्स: अ ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ ह्यूमनकाइंड* समेत अनेक पुस्तकों के अनुवाद किए हैं।

सभी चित्र: शेफाली जैन: चित्रकार हैं। महाराजा सयाजीराव युनिवर्सिटी ऑफ वडोदरा से पढ़ाई। वर्तमान में अम्बेडकर युनिवर्सिटी, दिल्ली में सहायक प्रोफेसर हैं।

डार्विन की बार्कमकड़ी (Bark Spider): मादा बार्क मकड़ी जो आकार में तो नाखून के बराबर होती है लेकिन दो मीटर तक फैलाव वाला गोलाकार जाला बुन सकती है। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि इसके जाल का धागा दुनिया के मज़बूत धागों में से एक माना जाता है। इस मकड़ी की जाल बुनने की क्षमता को लेकर एक और बात उल्लेखनीय है। वो यह कि बार्क मकड़ी अपने जाल के एक छोर को लगभग 25 मीटर दूर तक फेंककर किसी अवरोध तक पहुँचा देती है। फिर इस एक धागे के सहारे जाल को बुनती जाती है। जाल गोलाकार हो या बेहद लम्बा, मकसद तो आप जानते ही हैं!!

RNI No.: MPHIN/2007/20203

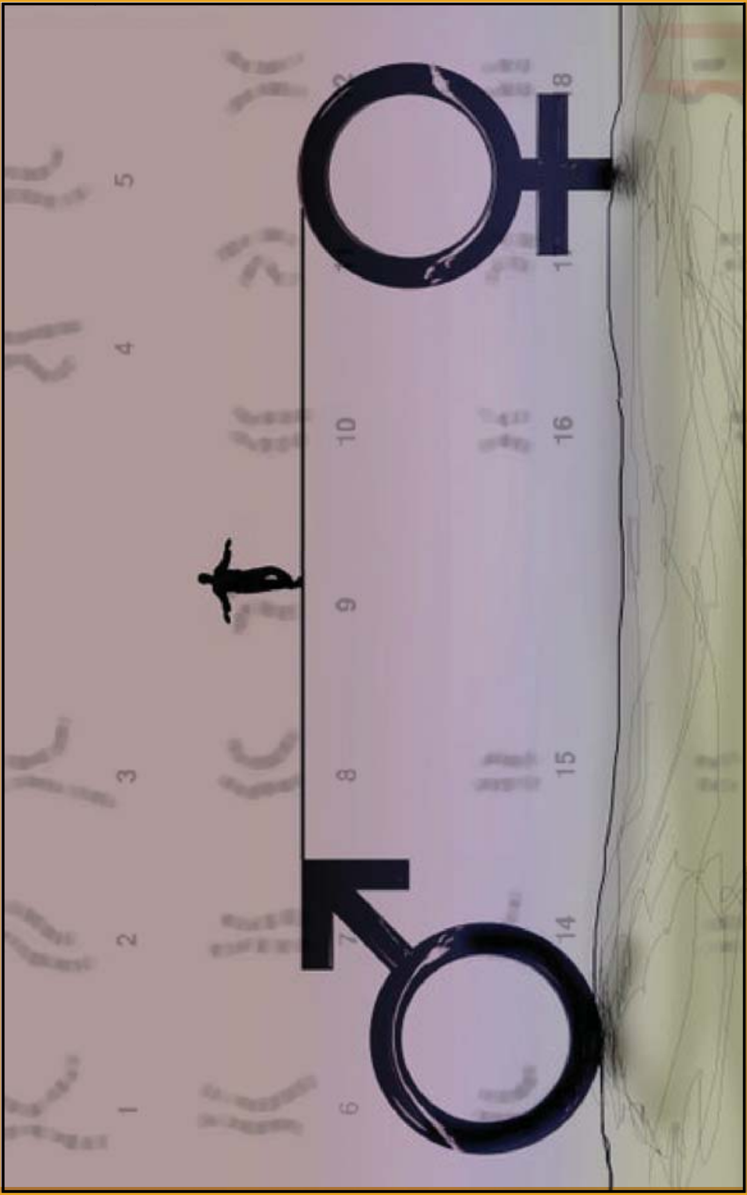

प्रकाशक, मुद्रक, अरविन्द सरदाना की ओर से निदेशक एकलव्य फाउण्डेशन,
जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल - 462 023 (म.प्र.) द्वारा
एकलव्य से प्रकाशित तथा भण्डारी ऑफसेट प्रिंटर्स, ई-3/12, अरेरा कॉलोनी,
भोपाल-462 016 (म.प्र.) से मुद्रित, सम्पादक: राजेश खिंदरी।